चेतना का शिल्प

प्रथम सस्करण 1987

लेखक
गिरधारीलाल व्यास
छबीली घाटी, बीकानेर

मूल्य { सजिल्द 15 00 रु
अजिल्द 10 00 रु

प्रकाशक लेखक स्वय

मुद्रक राशन प्रिण्टस, कुचीलपुरा, बीकानेर

दुनिया भर के संघर्षशीलों को

अनुक्रम

विषय

- आभास
- शिक्षा का आधार 7
- बाल हृदय की गहराइया और उन गहराइया का शिल्प सौंदय 12
- मैं तैयार हू 19
- किशोर अपराधियो का मसीहा ए एस माकारेंको 30
- शिक्षक होने का मतलब 39
- हमारी शिक्षा का एक उपेक्षित विन्दु 44
- शिक्षक सगठन सार और स्वरूप 49
- व्यावसायिक सगठन की प्रकृति और शिक्षक-सघ 61
- चुनौतिया और सघर्ष 66
- ये लघु पत्रिकाए 78
- भूमिका 80
- शिक्षक की स्वय की आरोपित जवाबदेही 82
- गणित मे महिलाओ की समभिक्षमता 83
- तोड दो फन और काट 85
- वातायन खोल दो 89
- बधन तोडने होगे 93
- स्थायी समाधान 97
- अनुशासन-भग की सजा दो 102
- विरोध करो 102
- समझौता मत करो 103
- अपने सपने सबके सपने 104
- चयन 105
- विकृतिकरण 108
- डायरी का नाट 113

आभास

—1—

ग्रा, जरा नजदीक ग्रा जरा ग्रोर नजदीक ग्रा जरा ग्रोर नजदीक ! हाँ, इतना करीब ग्रा जा कि तुझे प्रकाश म—तुम्हारी खुद की ग्राग के प्रकाश मे मैं तुम्ह साफ तौर पर देख सकू , देखकर तुम्ह तुम्हारे नग्न रूप मे पहचान सकू ! ग्रा, जरा ग्रोर करीब ग्रा जा !

वे करीब ग्राते । वह देखता बात करता सोचता, जाचता, व्यवहार ग्रोर कृतित्व ग्राकता ग्रोर परिणाम निकालता । कितनो के नए-नए राज खुलते । काफिले म कितनो को पीछे रहना पडता, कइयो को पीछे जाना पडता ग्रोर कई पिछडे हुग्रो को ग्रागे ग्राना पडता । उसकी ग्राँख से बचकर निकलना मुश्किल था—बहुत बहुत मुश्किल ।

वह कहता—ग्रा ग्रोर नजदीक ग्रोर नजदीक ग्रोर नजदीक ! वह सबको नजदीक से देखता-जलते हुए प्रकाश म । पहचानता—हर तरह से देखकर पहचानता ग्रोर ग्रागे पीछे धकेलकर व्यवस्था दे देता ।

जितना उसे लेना होता ले लेता जब्त कर लेता-धरोहर बनाकर रख लेता—ग्रागे बढता जाता । काटो को कुचलता, कूडे को फेंक देता ।
जीवन का क्रम रहा है गति की दिशा म ।

× × ×

—2—

तुम्हारी क्रूरता क ग्राग विवशता के ग्रतिरिक्त ग्रोर कोई चारा नही । विधि, विधाता भाग्य ग्रोर भगवान की उत्पत्ति म यह विवशता ही तो ह । बुढापा दुघटना ग्रोर मृत्यु तुम्हारी क्रूरता ही तो है । मासूम बच्चे को ममलकर

मारने म भी जहा कोई हिचक नही। जवानी को छीनते हुए भी जहा कोई विराम नही।

तुम्हारा आकर्षक सौन्दर्य दूसरी विवशता है जहा पराजय स्वीकार करने के अलावा और कोई उपाय नही। अनेक रूपरगो से सुसज्जित, अनेक स्वरो म मुखरित, अनेक विलासो से भरपूर–जहा काबू रहा ही नहीं जाता। तुम्हारे अग अग मे, कण कण म अनन्त सौंदर्य है–अनुपम लावण्य। कोई देखता है तो देखता ही रहे सुनता है तो सुनता ही रह, सूघता ह तो सूघता ही रह और झूमता है तो झूमता ही रह।

तुम्हारा रहस्य–आवरण पर आवरण, पर्तो पर पर्ते–एक का भेद खुल तो उसके साथ ही अनेक पहेलिया बनकर सामने आ जाय–हमारी एक और विवशता है। तुम्हारी इतनी गहराइया देखकर आतंकित होना पडता है।

तुम्हारी कोमलता को स्पश का आघात भी सहन नही होगा। यह क्या कम विवशता है? बताओ, तुम्हारी क्रूर कठोरता का इसम कहा मल बठता है?

और इसके बावजूद है तुम्हारी विशालता, तुम्हारी अनतता कही पार नही। एक और तुम्हारी यह विशालता–यह अनतता और दूसरी ओर यह सूक्ष्मता, सीमाबद्धता यह अक्षमता यह विवशता।

और प्रकृति, जितनी तुम बाहर हो उतनी ही भीतर भी।

विवशता म भी जीवन बढ रहा है–बढता रहेगा।

× × ×

—3—

प्रथम परिचय।
परिचयो की शृखला।।
बातचीत, भगिमाए प्रदशन आत्मप्रकाशन।
अतद्व द्व?

दुस्साहस—स्पश और स्पश और और स्पश विविधता स विविध भगिमाओं से विविध अगो का।

फिर
आलिगन, चुबन
और फिर
सयोग सभोग तुष्टि ! इसका दूसरा पक्ष—बाह्य द्वद्व, अवरोध
सामाजिक या आर्थिक और फिर
वियोग वेदना घुटन, जलन
अथच मरण !
आत्महनन ! आत्महनन !!

—इन्ही पक्षो मे है कवि की कविता, सगीतकार का सगीत, चितेरे के चित्रण मूर्तिकार का मूर्तन, साहित्य की अनेक विधाए तथा अनेक शास्त्र और विद्याए।

यह भूख है प्यास है, एक बडी समस्या है-समाज की व्यक्ति की अथवा जीवन की । यह योग है, रोग है, भोग है। यह वेदना है आनन्द है, रहस्य है। यह आवश्यकता है, वासना है, साहसिक काय है। यह प्रेरणा है भटकाव है, मार्गातीकरण है। यह खतरा है, खिचाव है, तनाव है। यह जीवन है

इस प्यार और इश्क की हरियाली और अधियारी मे व्यष्टि और समष्टि विवशता ग्रस्त है फिर भी जीवन का विकास होता ही जाता है, होता ही जा रहा है और निरतर होता ही जाता रहेगा। हा, विकास कभी नही रुकता चाहे कोई पाए तोड पलायन कर अथवा आत्महनन कर !

× × ×

—4—

वह आ रहा है। देख, वह उन्मुख उन्नत हो रहा है। रोक मत ! रोकना व्यर्थ है क्योकि उसका रुकना असम्भव है। उसके पीछे-उसके साथ-उसके भीतर एक ऊर्जा है, एक शक्ति है।

दमन व्यर्थ है रे, चाहे अपने कातिल बाजुओ का कितना ही आजमाले ! उसको तो आना ही है, उसको तो खिलना ही है। उसको आना ही होगा खिलना ही होगा। तुम्हारे सारे षडयन्त्र सारी विधियाँ, भरपूर उत्पीडन विफलता की मिट्टी मे मिल जायगे-आज नही तो कल। तुम्हारी अपनी प्रवृत्ति है और उसकी अपनी। तेरी शक्ति ह्रासोन्मुख है और उसकी उदयोन्मुख, विकासोन्मुख !

तू पुरातन वह नवीन ! एक मरणासन्न जीवनोन्मुख को नही रोक सकता–चाह वह किसी भी क्षेत्र म क्यो न हो।

चिनगारी शोला बनेगी, चिनगारियाँ शोले बनेंगी, हवा के झोंको स टकराएगी और ज्वालाए प्रज्वलित होकर ढेर को भस्म कर देंगी।

द्वन्द्व होगा सघर्ष होगा, सग्राम होगा और विजय पराजय के परिणाम सामने आएग। विजय उसकी और पराजय तुम्हारी होगी।

बडिया चटखेंगी, बधन टूटेंग और स्वत त्रता स्वतन्त्र को मिलगी–तुम परत त्र को नही।

विकास का इतिहास प्रतिभू है !

तू अपनी हरकता से बाज आन वाला नहीं। तुझे वही करना है जा तरी रग रग म है और उस इन हरकता के विरुद्ध किए जा रह सघर्ष को जीतना ही है क्याकि यह उसका स्वभाव है।

सघर्षमयी विषमताओ म ही जीवन पलेगा, जीवन फलेगा !

× × ×

—5—

नही, किसी भी कीमत पर नही ! तुम्ह जीने का कोई अधिकार नही। जहा कही जिस किसी रूप म भी तुम हा–तुम्ह, जिस किसी तरीके से भी हो–समाप्त करना ही होगा ! मानवता का हत्यारा मानवता की हत्यारी व्यवस्था जीवित रहन याग्य नही।

दास स्वामिया ने गुलाम दासा और सामतो–राजाओ ने भूदासा को यत्रणाए देकर दासता और भूदासता को कायम रखना चाहा किन्तु दास सामती व्यवस्थाओ की मजबूरिया न विस्फोटित होकर निरकुश तन्त्रो को समाप्त कर दिया। स्वतन्त्रता बेडियो को तोडकर फिर स्वतत्र हो गई।

अब शोषण आया। भूख आई। भीख आई। बेइज्जता आई। मूल्य केवल राटी का रह गया। रोटी का मूल्य मानव का जीवन ! व्यक्ति द्वारा व्यक्ति वग का शोषण, देश द्वारा दूसरे देश का शोषण !

भूख बरदाश्त के बाहर हुइ। शोषित न सीमाए तोडी।

तुम बचकर नही जा सकते। तुम्हे मरना ही होगा, मिटना ही होगा। तुम हमसे कुछ भी कीमत अदा करो–लेकिन हम तुम्हे जीवित नही देख सकते।

उसे मारकर फेंक दो। उसे बेरहमी से तोड दो। उसे क्रूरता से कुचल डालो। उस पर दया मत दिखाओ उसके किसी जाल मे मत फसो, उसे किसी भी रूप मे जिन्दा मत रहने दो।

शोषण और भूख की मजबूरियो मे भी जिन्दगी आग बढ रही है। वह बडी से बडी कुर्बानी देकर भी विजयी होगी।

× × ×

—6—

हा, तू प्रतिभा है, चमक है। अधेरा तुम्हे रोक नही सकता।
तू स्वार्थी है, छलिया है ढोगी है स्वकेन्द्रित है–निम्नगामी है।
तू कामुक है, क्रोधी है अहकारी है।
तू बडे से बडा बलिदान भी हसते हसते देता है।
मृत्युचक्र मे पिसने की यत्रणा भी सत्य के लिए सह लेता है।
तू पीठ मे छुरा भोकने वाला है। इसानियत के खिलाफ जासूसी करता है।
तू षडयन्त्रकारी प्रतिक्रियावादी है।
तू पलायनवादी है। आत्महत्यारा है।
तू क्रूर और आततायी है। शोषण का प्रतीक है।
तू दार्शनिक है, वैज्ञानिक है व्याख्याता है, नेता है।
तू शक्ति का प्रतीक है, बुद्धि का प्रतीक है भावना का प्रतीक है चेतना का जागृति का प्रतीक है। तू सगठनकर्ता है।
तू विघटक है।
तू आतकवादी है।
तू श्रद्धा और दया का पात्र है।
तू भयभीत है निर्भय है, डावाडोल है, समझौतावादी है अवसरवादी है।
तू कोमल है, मधुर है।
तू व्यक्ति है—विश्व समाज की इकाई।

तुम्हारी विशेषताओ और विषमताओ से पूर्ण विवशताओ मे भी जीवन निखरता जाता है–निखरता रहेगा।

× ×

राष्ट्रीयता की सीमाओं म विभाजित है व्यष्टि के समस्त योग का स्वरूप। इसे समाज कहते है।

वह धीम धीमे आगे बढता है। उसकी अपनी चाल है। चलता जाता है वह आगे की ओर। कभी कभी कदम तेज भी कर देता है। प्रतिभाओं स जगमगाता है।

वह अपनी इकाइ को व्यवस्थित करने के लिए हर प्रयत्न करता है। किसी को घटा देता ह तो किसी का बढा देता है।

कई बार वह नई चमक मे चौंधिया कर चमक को ही मिटाने का प्रयत्न करता है। कभी कभी आकस्मिक सत्य को न अपना सकने की सूरत म वह उस निगलने का प्रयत्न करता है।

कभी कभी वह गहरी नीद म सो जाता है तो कभी कभी एकाएक सचेत होकर चल पडता है।

वह व्यक्ति को कु ठाए देता है, व्यगपूर्ण हसी देता है उसका दमन करता है, उसको आग म झोक देता है।

वह जलता है और जलाता भी है।
वह परम्परावादी होते हुए भी विकास के माग पर चल रहा है।
वह किसी को ऊचा उठाएगा तो उसे धडाम स गिरा भी देता।
वह परम चेतना है वह चरम सु दर है और सहज सत्य है।

इसकी अपनी विशेताए है इसकी अपनी विषमताए हैं, कि तु इन सबकी छाया म भी जीवन की गति आग की ओर अग्रसर हो रही है, होती रहेगी।

सन् 1966 ई०

शिक्षा का आधार

मानव समाज का प्रस्थानबिंदु शिक्षा का आदिस्थल है। दोनों में से किसी को अलग करके नहीं देखा जा सकता। धर्म, तत्त्वज्ञान, आध्यात्म, ईश्वर, आत्मज्ञान, चेतना, नीति, संस्कृति, कला, साहित्य तथा सभ्यता आदि सभी से पूर्व शिक्षा का अस्तित्व रहा है। जब तक मानव अस्तित्व रहेगा—चाहे ईश्वर और धर्म आदि से लेकर सारी आदर्शवादी और भावनावादी परिकल्पनाएं तक अर्थहीन साबित हो जायें, किन्तु शिक्षा की वास्तविकता तो उसके अस्तित्व के साथ कायम रहेगी ही। इसलिए शिक्षा को मानव का अभिन्न अंग माना जाता है। किसी भी शिक्षा-समीक्षक का प्राथमिक अनिवार्य कर्तव्य होगा कि वह मानव के भौतिक विकास और शिक्षा के वस्तुगत विकास की अभिन्नता को ऐतिहासिक भौतिकवाद की पृष्ठभूमि में देखे।

शिक्षा के आकार और अंतर्य के विकास को समझने के लिए उसकी प्रक्रिया को समझना वांछनीय होगा। उसकी वस्तुमूलकता और आत्ममूलकता में प्राथमिकता का तय करना पूर्व शर्त होगी। शिक्षा, उपदेश, धर्म, नीति, परम्परा, संस्कृति, दर्शन तथा विज्ञान के मूलस्रोत को पहचानना होगा।

यदि भाववादी दार्शनिक पद्धति से शिक्षा पर विचार किया जाता है तो उसका स्वरूप यह होगा कि हम शिक्षा का ऐतिहासिक विकास के नियमों से दूर रखकर उसका विश्लेषण करेंगे और यदि ऐसा किया जाय—जैसा कि भावनावादी चिंतनशाला के अध्ययनकर्त्ता किया करते हैं तो हम वैज्ञानिक निष्कर्षों को प्राप्त नहीं कर सकेंगे और हमारा श्रम व्यर्थ हो जायगा। इसलिए हमारे पास एकमात्र विकल्प वैज्ञानिक भौतिकवाद ही बच रहता है।

आदिकाल में शिक्षा वस्तुमूलक रही है, वह गतिशील रही है उसमें द्वन्द्वात्मकता रही है और वह विविध रूपा रही है तथा वह भविष्य में भी अपने अस्तित्व तक वस्तुमूलक गतिशील, द्वन्द्वात्मक, जटिल और अनेकरूपा रहेगी।

शिक्षा की भौतिक संरचना में पदार्थीय आधार, उसका क्षेत्र, उसका काल क्रम, उसकी गति, उसमें होने वाला अस्थायी विराम, उसमें होने वाले अन्तर्विरोध अथवा उसकी द्वन्द्वात्मकता, उसका युगीन चरमोत्कर्ष उसका युगीन निषेध और फिर विरासत को गुम्फित करते हुए नयी उत्पादन प्रक्रिया में अनुकूल शिक्षा व्यवस्था में एक नया निखार जिसे एक काल विशेष की नयी शिक्षा भी कहा जा सकता है—को परखना होगा।

शिक्षा के आदान प्रदान में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग मस्तिष्क होता है जो वैज्ञानिक मान्यतानुसार एक अति संगठित पदार्थ है और चेतना उसका गुण धर्म है। भौतिकवाद के मुताबिक चेतना प्रकृति की उपज है। पदार्थ अथवा प्रकृति सदा से विद्यमान है पर मनुष्य अपेक्षाकृत भौतिक जगत के बाद के विकास का परिणाम है। मस्तिष्क को चिंतनशील इन्द्रिय माना जाता है। इसकी सक्रियता विचार, आवेग इच्छा शक्ति, चरित्र, संवेदनाएं और मन आदि के रूप में दिखायी देती है। इसकी चेतना भौतिक परिवेश के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है वह इस परिवेश के प्रकार के बिना कार्य नहीं कर सकती। रंग, गंध, ध्वनि आदि भौतिक प्रतिमाओं के प्रभाव में ही संवेदनाएं उत्पन्न होती हैं। इन्हीं संवेदनाओं के आधार पर अनुभूतियाँ, धारणाएं और विचार अनेक रूप धारण करते हैं। शिक्षा के विकास में यही प्रक्रिया होती है। पदार्थ से विकसित चेतना शिक्षा का माध्यम बनती है और फिर शिक्षा चेतना के विकास का माध्यम।

श्रम ने स्वयं उस मनुष्य का उसके वास्तविक अर्थ में निर्मित किया और विकसित किया जिस श्रम को उस मनुष्य ने अपने जीवन को धारण करने के लिए पैदा किया था। श्रम से हाथों को मुक्ति मिली। हाथों ने उपकरण बनाये। उपकरणों का सृजन शिक्षा का साधन बना। श्रम ने शिक्षा को पैदा किया। श्रम अर्थात् भौतिक मूल्यों का उत्पादन, पुनः श्रम अर्थात् पुनः भौतिक मूल्यों का उत्पादन। इसी में विकास की कुन्जी है, इसी में शिक्षा की कुन्जी है। यही हर तकनीक की कुन्जी है। श्रम ने चेतना को उत्पन्न किया, चेतना ने नया निर्माण किया और नयी निर्मित शिक्षा का विषय बन गयी, उसका अंग बन गयी।

उपकरण निर्माण, आग के उपयोग, खाद्य-संग्रहण, आवासीय आश्रय, स्वरानुसरण सामाजिक अनुकरण और सामुदायिकता—ये ही तो थे सीखने सिखाने के आदि विषय। शिक्षा के समूचे विकास को समझने के लिए विकास के नियमों अर्थात् विपरीतों की एकता और संघर्ष के नियम, परिमाणात्मकता से गुणात्मकता

म परिवतन के नियम और निषेध का निषेध के नियम – को समझना अथवा उनको आधार रूप म स्वीकार करना आवश्यक होगा। क्योंकि विपरीता की एकता और सघप का नियम शिक्षा के स्रोत और उसकी उत्प्रेरक शक्तियो का उद्घाटन करता है, परिमाण से गुण मे विकास का नियम शिक्षा के गुणात्मक परिवतन को लक्षित करता है और निषेध के निषेध का नियम शिक्षा म होने वाली ऊर्ध्वगामी प्रगतिशीलता का परिचय देता है। एक युग की शिक्षा के स्वरूप स दूसरे युग की शिक्षा म जो भिन्नताए पदा हो गयी—जो रूपान्तरण हुआ उसकी पष्ठभूमि म निश्चित रूप से दो युगो की भिन्नताए रही है जिनका अध्ययन त्रिता उपयुक्त त्रिसूत्री नियमावली क किया ही नही जा सकता। शिक्षण की प्रक्रिया म भी आगमन और निगमन, विश्लेषण, वर्गीकरण और सश्लेषण आदि विपरीत, किन्तु परस्पर सम्बद्ध विधियो का प्रयोग किया जाना है। ज्ञान जब-जब प्रजानी को हस्तान्तरित किया जाता है तो एक प्रकार का अन्तर्विरोध स्वाभाविक होता है जो जिज्ञासा और समाधान के रूप म देखा जा सकता है।

उपयुक्त सकलित मुख्य दाशनिक परिकल्पनाओ अर्थात् पदाथ और चेतना फिर गति, देश और काल फिर मौलिक नियम जस अन्तर्विरोध, परिमाण गुण और निषेध का निषेध आदि के अलावा अय महत्त्वपूण परिकल्पनाए हैं विशिष्ट और सामान्य क्षेत्रीय और सावभौम अन्तवस्तु और आकृति सार और व्यापार कारण और काय, अनिवायता और आकस्मिकता सम्भावना और वास्तविकता आदि। ये सभी ज्ञान प्राप्ति की पष्ठभूमि का निर्माण करती हैं। शिक्षा म सिद्धात और व्यवहार की एकता उसके वस्तुगत सत्य की ओर ले जाती है। ज्ञान शक्षिक प्रयोगो, अभ्यासो और विधियो को विकसित करते हैं और इसम आगे का रास्ता साफ तौर पर दिखाई देने लगता है। सवेदनात्मक ज्ञान म हम तार्किक ज्ञान की ओर अग्रसर होते हैं जो उसका नयी उच्चतर मजिल होता है। इसी क्रम से हम सत्य की ओर बढते हैं जिसकी कसौटी व्यवहार होता है।

ये मोटे तौर पर शिक्षा को समझने के लिए दार्शनिक आधार भूत बिन्दु हैं। सामाजिक एतिहासिक पष्ठभूमि के बिना उसकी सरचना का विश्लेषण कर सकना सम्भव प्रतीत नही होता।

शिक्षा को इस दृष्टि स न देखा अथवा इस भाववादी या प्रत्ययवादी पद्धति से समझने की चेष्टा करने पर कोई वैज्ञानिक निष्कर्ष तक नही पहुचा जा

सकता ? इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नकारात्मक होगा, क्योंकि भाववादी दर्शन सृष्टि की रचना का प्राथमिक कारण चेतना को मानता है जबकि शिक्षा का प्राथमिक आधार खाद्य संग्रहण अथवा उपकरण निर्माण है जो पूर्णत भौतिक है। दूसरा कारण यह है कि भावनावादी विश्व को अज्ञेय और अपरिवर्तनशील मानता है, जबकि शिक्षा ज्ञेय और परिवर्तनशील रही है। भावनावादी जगत को माया कहकर झुठलाता है जबकि शिक्षा एक बहुत बडा वस्तुगत सत्य है। भावनावादी 'परमात्मा' का निर्माता मानकर उसको दर्शन का प्रस्थान बिन्दु और साथ ही उसको दर्शन का चरम बिन्दु मान लेता है और उस निर्माता और उसकी रचना पर किसी प्रश्न-चिह्न को अथवा तर्क को स्वीकार नहीं करता जबकि शिक्षा का प्रस्थान बिन्दु मानव का भौतिक जीवन है और उसका गतिशील बिन्दु मानव के भौतिक जीवन के विकास को प्रभावित करने और साथ साथ स्वयं भी विकसित होने वाला बिन्दु है। शिक्षा का एक अंग संवेदनात्मक ज्ञान है तो दूसरा तार्किक ज्ञान, एक अंग व्यवहार है तो दूसरा सिद्धान्त। अतः अतार्किक और सिद्धान्तहीन भावनावादी दृष्टि या दर्शन से शिक्षा की व्याख्या नहीं की जा सकती जहां कहीं किसी शिक्षाविद् ने अथवा शिक्षाविदों ने ऐसा किया है-वे स्वयं तो गुमराह हुए ही, अपितु उन्होंने दूसरों को भी पूरी तरह गुमराह किया है। अतः शिक्षा का अध्ययन करने के लिए उपयुक्त द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी दार्शनिक पद्धति के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है।

शिक्षा पर दृष्टिपात करने पर सबसे पहले उसके आधार को देखना आवश्यक होगा, क्योंकि उसके बिना शिक्षा की सारी रचना को समझ पाना असम्भव सा होगा। इस महाब्रह्माण्ड के विकास के एक भाग के रूप में जब पृथ्वी का विकास समझने लगते हैं तो इसी समझने की प्रक्रिया में हम मानवाभों का अथवा आदिम मानव का एक रूप 'उपकरण-निर्माता' का मिल जाता है। यह उपकरण निर्माता की क्रिया उसके उस कौशल की ओर संकेत करती है जो खाने की चीजों के उत्पादन कर उसके नियन्त्रण को निर्धारित करता है और जब इस उपकरण निर्माण के कौशल या प्रविधि का वह अपनी सन्तान को हस्तान्तरित कर देता है अथवा अपना बोलता चिह्न पीछे छोड़कर विलीन हो हो जाता है और विलुप्त मानवाभ की अगली कड़ी वाला मानव उसे अपनाकर पुनरुत्पादन चालू कर देता है और फिर उसे हस्तान्तरित कर देता है—तो वह प्रथम शिक्षण अथवा प्रशिक्षण बन जाता है। अतः हम उपकरण के निर्माण और उसके उपयोग अथवा उत्पादन प्रक्रिया को ही शिक्षा का आधार मानना पड़ेगा। आगे के सभी ऐतिहासिक युगों के विकास में उत्पादन पद्धति ही उसका आधार बनी है

श्रौर यही उत्पादन पद्धति, जिसम उत्पादन शक्तिया श्रौर उत्पादन सम्बध शामिल किये जात हैं नि स देह शिक्षा का भी श्राधार होती है। पिछल दो करोड साला से जहा कहीं भी शिक्षा की कोई भी प्रवृत्ति, चाहे वह स्वशिक्षण अनुकरण श्रथवा शिक्षण प्रशिक्षण के रूप म रही हो—उसका श्राधार उत्पादन पद्धति स श्रलग नही रहा। श्रादिम मानवयूथ, श्रादिम साम्यसघ प्रजातिया क समुदाय, दास प्रथा क लाग, साम ती व्यवस्था क लोग, पू जीवादी युग क लोग श्रौर समाजवादी समाज के लोग श्रपनी उत्पादन पद्धति के श्राधार पर ही श्रपन श्रापको शिक्षित करत रहे हैं।

होमोहैबिलिस, उसस हामो इरक्टस, हामो इरक्टस स होमा सपिय स (प्रज्ञ मानव) श्रौर प्रज्ञ मानव की प्रजा स विकसित श्राधुनिक मानव एक बहुत दीघ कालीन विकास प्रक्रिया का प्रतिफल है। मानवाभ स श्राधुनिक मानव की श्रवस्था तक श्राने म जसे उसन विकास की श्रनेक मजिलें तय की—उसके साथ ही शिक्षा की भी उसन श्रनक मजिल तय कर ली थी। मानव का शारीरिक-स्तर एक श्रोर सवेदनात्मक ज्ञान के विकास क रूप म बढता रहा तो दूसरी श्रोर वह तार्किक ज्ञान क विकास के रूप म बढता रहा। व्यक्तिगत श्रौर सामुदायिक दानो प्रकार की चेतनाश्रो का विकास होता रहा। भौतिक मूर्त्तता से श्रमूर्त्त ता उस श्रमूर्त्त ता स फिर मूर्त्त ता श्रार इसी श्रनवरत श्रमक्रम स विरासत-दर-विरासत चेतना कर चेतना श्रथवा शिक्षा दर शिक्षा न केवल पदा ही हाती रही श्रपितु पुनरुत्पादित भी बनती रही। सवेदनाए श्रनुभूतिया श्रभिव्यक्तिया एक श्रोर विकसित होन लगी तो धारणाए निष्कष श्रागमन-निगमन तुलना द्वारा प्राप्त विश्लेषण, वर्गीकरण, सश्लेषण श्रमूर्त्तीकरण तथा साधारणीकरण की क्षमताए व्यापकतर होती गयी।

यही शिक्षा-दशन का वज्ञानिक श्राधार है जिसस दूर हटना मात्र भटकना भटकाना होगा।

सितम्बर 1984

शिक्षाशास्त्र की बेजोड किताब

वसीलो सुखोम्लीन्स्की कृत

बाल हृदय की गहराइया और उन गहराइयो का शिल्प सौंदर्य

मत्युवाही धातु के टुकडे छाती म धस हुए हैं और वह अथाह गहराइयो म लगा है उतरने । तह तक डूबने की रोमाचक यात्रा है उसकी । वैज्ञानिक अनुशासन की कठोर चेतना है उसके मस्तिष्क म, और सबसे बढकर है उसक पास वह शिल्प कि वह उन गहराईया म स उपलब्ध हुओ का एक ऐसा समायोजन कर सके उससे कि एक नही अनेक सुदर मानवात्माओ की सजीव प्रतिमाए-प्रतिभाए उभर सकें ।

वह स्वय इतिहास की एक अनुपम रचना है—एक सजीव प्रतिमा, जिसम शहीदी जजबात है—जिसमे दार्शनिक की विश्लेषक और सश्लेषक प्रतिभा है—अपनी और समाज की भोगी हुई पीडाओ से उदभूत कला । वह वही है-हा, उसक समान केवल वही है । वह अपना है-सबका है एक उत्स । वसीली सुखोम्ली स्की ।

प्राचीन गुरुकुलो के गुरु, अरस्तु और उसकी पूरी श्रृखला, रूसो स लेकर गाधी के बुनियादी तालीमी उस्ताद, फ्रायडियन स्कूल के मनोवैज्ञानिक प्रयोगशील विशेषतया शिक्षा की प्रकृति—(Nature of Education) को निर्धारित करने वाले क्रियाकलाप कर्मी–सभी महत्वपूर्ण है, कि तु किसी म वसीली जसी सुर्खी नही दिखाई देती—क्याकि किसी भी गुरु या मनोवैज्ञानिक या शिक्षा शास्त्री की पष्ठभूमि एसी नही कि एक अध्यापक (वसीली सुखोम्ली स्की)

फासिस्टो से देश की रक्षा के लिए युद्ध म गया हो, मत्युवाही धातु के टुकड उसकी छाती म घस गए हो, गेस्टापो द्वारा उसकी युवा पत्नी वेरा को गिरफ्तार करके यातना कैंप मे रखा गया हो, उसका पहला बच्चा वही जेल मे पदा हुआ हो, बच्चे को उसकी मां के सामने मार डाला गया हो और फिर उसकी पत्नी को भी मार-मार कर मार डाला गया हो, सब कुछ बरबाद कर दिया गया हो, जो घावो को छाती म छुपाए बाल हृदय की गहराइयो म इतना गहरा पहुचकर एक नए इसान की नई पीढी का निर्माण कर जाय—यह उदाहरण विश्व क किसी भी कोने के शिक्षा इतिहास म देखन को नही मिलगा।

"बाल हृदय की गहराइया वसीली सुखोम्ली स्की की बेजोड अमर रचना है—विश्व साहित्य की एक अमर रचना। वह है सूर के गीतो की ताजगी और ममता लिए, रूसा की प्रकृति उ मुक्तता बटोरे, स्किनर, ओ एण्ड ओ, स्ट्रग एडलर और कुप्पूस्वामी के बाल विकास और विशषतया बाल कल्पना की सजी वता के गम्भीर अध्ययन सवार और गाधी जाकिर आशा गिजुभाई की मिशनरी जीवतता लिए हमार इतनी करीब।

जब विश्व कवि रवि द्रनाथ अपने शाति निकेतन क अनुभव को कहत है—"मरे स्कूल म बच्चा न वृक्षा की रचना का सहज ज्ञान प्राप्त कर लिया है। बिना स्पश किए हुए वे जान लते हैं कि वृक्ष की अनाहृत डाल पर कहा पर जमाया जा सकता है। —और जब 'बाल हृदय की गहराइया म वसीली सुखोम्ली स्की अपने अनुभव को इस प्रकार पुनराकित करता है— मुझ यह देख कर बडी खुशी होती थी कि बच्चो को पौधो स गहरा लगाव होना जा रहा ह, वे मिट्टी के जीवन को अनुभव करते है। उ होन प्रत्यक्षत यह देखा कि प्रकृति पर ज्ञान की कितनी बडी सत्ता है, सिद्धा त और व्यवहार म कसी एकता ह।' —तो कितना बडा साहचय परिलक्षित होता ह उपयु क्त दा महान् अनुभूतियो म।

अनुक्रम की सुविधा 'खुशियो का स्कूल और 'बचपन क दिन' म विभाजित है। व वनानिक पक्तिबद्धता मे अवस्थित है और कलात्मक ओज स अभिव्यक्त। वसीली के व्यवस्थापन म आता है सवप्रथम बच्चो का प्यार करना ऐसा प्यार कि बच्चे अध्यापक से एकमन होकर सब कुछ कह गुजरें—उसके वाद उसक मा बाप स सम्पक-साधन, फिर बच्चा को प्रकृति के प्रागण म ल जाकर

उनकी कल्पना को जगाना और फिर चित्रकला, श्रम सीकरता, सगीत, अध्ययन की विविधताए और उन मासूम दिनो के समुद्रतला से अनेक अमूल्य निधियो को खीचकर ऊपर लाना। सब कुछ इतनी खुशियो के साथ-इतने दद के साथ और फिर सबसे बढकर इतनी सहजता के साथ सम्पादित होता है।

वसीली बच्चो के स्वास्थ्य के सरक्षक हैं—इसलिए बच्चो को उन पर अटूट विश्वास हो गया है। भौतिक और सास्कृतिक विकास एक ही प्रवाह म गतिमान है। वसीली के बच्चे चित्रकार, सगीतकार, वज्ञानिक कथाकार, कवि, प्रयोगशील, श्रमिक, कृषक भाषाविद्, देशभक्त, समाजवादी कम्युनिस्ट और नव मानव के रूप म एक साथ उभर रहे है और वह भी केवल तीन-चार वर्षों म ही। य व बच्चे है जिनम स अनेक अपने परिवारा को पूरी तरह देख ही नही पाए—मा-बाप, भाई बहिन के स्नह की ता बात ही क्या!

सुखोम्ली स्की ने 'बाल हृदय की गहराइया'—अपनी अमर रचना का, जो प्राथमिक कक्षाओ म उनके काम का दस्तावेज है—नौनिहाला को सौपते हुए कहा-'यह बचपन की दुनिया को समर्पित है। बचपन, बालजगत एक विशिष्ट ससार ह। भलाई और बुराई, मान अपमान और मानव गरिमा क बार म बच्चो के अपन ही विचार हात हैं, सु दरता की उनकी अपनी कसौटी हाती ह, यहा तक कि समय की माप भी उनकी अलग होती है बचपन म दिन साल जितना लगता है और साल अन त काल लगता है।'

कितना सही है उनका यह मापदण्ड कि 'वह व्यक्ति, जो छात्रा से केवल क्लास मे मिलता है—मेज के एक तरफ शिक्षक और दूसरी ओर छात्र-वह बाल हृदय की गहराइयो को नही जानता और जो बच्चा को नही जानता, वह उनका चरित्र निर्माता नही हो सकता।'

एक परिहासज य यथाथ चित्र के अनुसार कई बार मास्टर की मेज वह परकोटा बन जाती है जिसके पीछे से वह अपने 'दुश्मन' यानि छात्रा पर "हमला' करता है लेकिन ज्यादातर मामला मे यह मेज घिरे हुए किले के समान हो जाती है जिस 'दुश्मन" थका थकाकर जीत लेता है, और किले म घिरा सेनापति" अपने को बिल्कुल असहाय महसूस करता है।

स्कूल के प्रिंसिपल का सिफ एक प्रशासकीय कमचारी सा होना-जो केवल

यही देखता रहे कि मास्टर अपना विषय ठीक पढ़ाते हैं या नहीं—वसीली के लिए असह्य हो गया था।

शिक्षक के विषय मे उसकी यह धारणा है कि शिक्षक का सबसे बडा मूल्यवान गुण है—उसकी इन्सानियत, बच्चो से उसका अगाध प्रेम, ऐसा प्रेम जिसमे हार्दिक स्नेह के साथ-साथ माता-पिता की सख्ती और दृढता भी होती है। प्रिंसिपल के तौर पर काम करते हुए कई बार वसीली को गहरी पीडा का अनुभव हुआ जब उसने यह देखा कि अध्यापक शिक्षण का अर्थ केवल यह समझता है कि बच्चो के सिरो मे ज्यादा से ज्यादा ज्ञान भर दिया जाय, तो ऐसी स्थिति मे बच्चो का स्वाभाविक जीवन कितनी बुरी तरह से बिगड जाता है।

इस प्रकार फेद्या, नीना और साशा और गाल्या तथा कोल्या के लिए वसीली सुखोम्लीन्स्की है अगाध प्रेम करने वाला, उनका और उनके मां बाप का सच्चा दोस्त उनके शरीर और मन के स्वास्थ्य का हर घडी ध्यान रखने वाला सरक्षक और आत्मविश्वास के साथ उनको सही रास्ता दिखाने वाला नेता शिक्षक-प्रिंसिपल। वह प्राय इस सकल्प को दोहराता है कि—मैं यह कोशिश करूंगा कि मेरा हर छात्र बुद्धिमान चिंतक और अन्वेषक बने, कि विश्वबोध की दिशा मे उसका हर कदम उठाय हृदय को अधिक उदार बनाए तथा उसके सकल्प को सुदृढ करे। और इसके साथ ही वह अपने साथी अध्यापको को चेता वनी देता है—'हम अध्यापको का सरोकार उस वस्तु से होता है, जो प्रकृति मे सबसे कोमल सबसे सूक्ष्म और सबसे अधिक सवेदनशील है, और वह है—बाल-मस्तिष्क।

और इससे आगे बढकर वह इन्ही युवा शिक्षक साथियो को सलाह देता है कि—बडे ध्यान से और बहुत सोच-समझ कर बच्चो को उस क्षण के लिए तैयार कीजिये, जब आप मातृभूमि की महानता के बारे मे पहले शब्द कहेंगे। ये शब्द श्रेष्ठ भावनाओ से प्रेरित होने चाहिए।

वसीली का यूरा 'सरगोश' कहानी का कहानीकार और कात्या 'सूरज-मुखी' तथा यूरा 'खेत की जुताई' कहानियो के कथाकार बन गए। तरीमा कवि बन गई और उसने कहा—

मकडी के रुपहले तार
पिरोते है बूदो के हार।

सुशियो की स्कूल म कहानीकार और कवि यन तो चित्रकार भी हो।
नीना सूरज बनाएगी, सेर्योझा तालाब म तरते हस और दाका मछलियां।

फिर श्रम जगत की यात्रा होगी–कारखाना म और बगीचो म–सर्दी खेतो म फिर बासुरी बजेगी–बासुरिया बजेगी। छात्र गीतकार सगीतकार क्योकि उनके अध्यापक वसीली की मा यता है कि 'सगीत विचारा का स्रोत है।' और इसम और भी आगे–'सगीत–कल्पना–कहानी–सजन, यह वह पथ, जिस पर चलत हुए बच्चा अपनी आत्मिक शक्ति को विकसित है। सगीत की धुन बच्चा के मस्तिष्क म जीवन बिम्बो को जम देती है। वृत्ति की सजन शक्ति के साधन का अप्रतिम साधन है।'

ज्ञान के कटील पथ पर बच्चे का कितनी असफलताओ का मुह पडता है। उनके सामने 'नम्बरो का भूत' खडा कर दिया जाता है। इस के साय से बचा कर जब वसीली न अपन ही तरीक स पहला शब्द बच्चा सिखान म सफलता प्राप्त की तो वह अपार खुशी स भर गया और महसूस कर लगा कि जस वह प्रस नता का वह पाठ हो जो स्वय जीवन के द्वारा को सिखा दिया गया हो। बच्चे की चेतना म हर अक्षर किसी ठोस बिम्ब साथ जुड गया था।

सुखोम्लीस्की बच्चो क जितन अधिक निकट सम्पक म आ रहा था उतनी ही स्पष्टता स उसे यह दिखाई दे रहा था कि उसक शब्दा, उसकी नजर उसके परामर्शों और आलोचनाओ के प्रति बच्चो के हृदयो और मस्तिष्क की सवेदनशीलता तत्व होती जा रही थी। प्रत्येक बच्चा अपन आप म एक विशेष ससार था।

क्रमश बच्चो को न केवल शारीरिक, बल्कि बौद्धिक श्रम म भी कठिनाईयो पर विजय पाने की शिक्षा दी जाने लगी। वस्तुओ तथ्यो परिघटनाओ की विविधतम जटिलताओ और बारीकियो म, ब्यौरो और अतर्विरोधो म प्रवश करन आर उ हे समझने के लिए दिमाग पर जोर डालने की प्रक्रिया की ओर से प्रेरित किया जाने लगा क्योकि वसीली यह मानकर अपनी यात्रा म आग बढत थे कि ज्ञान प्राप्ति के साथ साथ बच्चो मे श्रम की सस्कृति और आत्मानुशासन की चेतना विकसित होती है। बौद्धिक शिक्षा आत्मिक जीवन का एक ऐसा क्षेत्र है जिसम शिक्षक का प्रभाव छात्र की आत्म शिक्षा के साथ पूरी तरह स मिला होता है।

गणित, समाज विज्ञान की विविध शाखाओं और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय धाराओं के प्रमुख घुमावों में बच्चों को ले जाकर बसीली न शिक्षकों को ऐसे अद्भुत प्रयोग करके दिखाए हैं जो शिक्षा शास्त्रीयता की दृष्टि से किसी पद्धति विशेष की खोज चाहे न कही जाय, पर उनकी यह शिक्षा यात्रा अपने आप में एक अनुपम और अपूर्व देन है जिसको अन्यत्र देख पाना सम्भव नहीं। शास्त्रीयता की परिधियां सिद्धान्त और व्यवहार की उस एकरूपता के सामने क्षत-विक्षत होकर व्यापकता की ओर देखने लगती हैं।

बसीली बच्चों को मूर्त से अमूर्त की ओर ले जाने में सिद्धहस्त हैं। उन्होंने कहा है—'मैंने यह लक्ष्य रखा था कि बच्चा की चेतना में यथार्थ जीवन के ज्वलन्त चित्र अंकित हों। मेरा प्रयत्न यही था कि सजीव बिम्बात्मक कल्पनाओं के आधार पर ही चिन्तन प्रक्रिया हो, कि बच्चे अपने परिवेश का प्रेक्षण करते हुए परिघटनाओं में कार्यकारण सम्बन्ध स्थापित करें वस्तुओं के गुणों और लक्षणों की तुलना करें।' और फिर उनकी 'प्रकृति पुस्तक' के पहले पृष्ठ का शीर्षक होता। 'सजीव और निर्जीव'। यहीं से वैज्ञानिक भौतिकवाद अथवा द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की शिक्षा का प्रवेश द्वार खुलता है। "प्रकृति पुस्तक" का दूसरा पृष्ठ 'निर्जीव और सजीव का सम्बन्ध' व्यक्त करता है। तीसरा पृष्ठ 'प्रकृति में सब कुछ परिवर्तनशील है' शीर्षक से है और इसी प्रकार आगे के क्रम में अनेक ज्ञानविज्ञान की प्रारम्भिक बुनियादी बातें सहज भाव से सरल भाषा के माध्यम से सिखा दी जाती हैं।

प्रकृति के संज्ञान के बाद 'समाज की ओर' संक्रमण होता है। बसीली की अपेक्षा है बच्चे के मस्तिष्क को विकसित और सुदृढ़ करने की चिन्ता, यह बिना कि संसार को प्रतिबिम्बित करने वाला यह दर्पण सदा संवेदनशील और ग्रहणशील बना रहे—यह शिक्षक का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है।

समाज के व्यापक स्वरूप को समझने के लिए देश विदेश की 'यात्राएं' बच्चे करते हैं—दृश्य उपकरणों के माध्यम से—कथाओं का सहारा लेकर लोक संगीत सुनते गाते हुए और साथ ही अनेक कहानियां-कविताएं रचते हुए। इनसे जिस लक्ष्य की ओर बढ़ा जाता है, वह है—फासिस्टों और साम्राज्यवादियों के हमले के खिलाफ मातृभूमि के लिए बलिदान देने की भावना पैदा करना और अखिल मानवता के लिए हृदय में प्रेम और सहानुभूति जाग्रत करना। लेनिन, जुलियस फूचिक और यानुश कोचाक जैसे वीर शहीदों की गाथाएं सुनकर बसीली के बच्चे बरबस कह उठते हैं—'ये सच्चे वीर हैं। हम भी ऐसा ही बनना चाहेंगे

और बच्चों ! यह तुम्हारी दुनिया की स्कूल का प्यारा प्रिंसिपल वसीली सुखोम्लीन्स्की इन्हीं वीर शहीदों की श्रेणी का वीर शहीद है, जिसने अपने पद पर ही 30 साल बाद एक नए शैक्षिक वर्ष के बिल्कुल प्रारम्भ में ही बच्चों की नई पीढ़ी के सम्मुख स्कूल के द्वार खोलकर प्राण त्याग दिए।

वसीली के अंतिम सबक थे—'दूसरों के लिए व्यग्रता से भरपूर जीवन' 'उदात्त भावनाओं से प्रेरित श्रम' और 'तुम देश के भावी स्वामी हो !' अपने छात्रों को वह निडर और साहसी बनने और सघर्षरत रहने का आह्वान करके अपनी जिन्दगी की गर्मी से विश्व-सदा के लिए विदा ले लेता है।

'बाल हृदय की गहराइयाँ' विश्व में शिक्षा विषय पर अपने आप में एक अनुपम कृति है। एक शिक्षा यात्रा का ऐसा प्रारम्भ जिसके आगे और ऐसी ही पाचेक यात्राएं पुस्तकाकार रूप में अंकित की जा सकती है—बशर्ते रचनाकार के पास वसीली सुखोम्लीन्स्की जैसी जीवंत अनुभूतियां हों। यह एक शिक्षा उपन्यास है कि एक कहानी—या एक गद्य काव्य अथवा अनुभूतियों के जीवित रेखाचित्रों का एलबम ! लेखक स्वयं नायक है, किंतु अकेला नहीं—31 बच्चे भी हैं, अनंत प्राकृतिक सौन्दर्य है रहस्य है खुशियां हैं दर्द हैं और शहीदों की पृष्ठभूमियां हैं। प्रश्न है कि क्या ऐसा भव्य भवन किसी ने आज तक खड़ा किया है—क्या ऐसा सुन्दर चित्र शिक्षा का आज तक अंकित किया जा सका है और क्या इतनी तार्किक प्रयोजना के साथ किसी शिक्षा सरचना का प्रस्तुतीकरण किया गया है ? इन सबके उत्तर में मौन ही मिलने का है।

यह अमर रचना अपना सानी स्वयं ही है और अंत में एक सन्देश छोड़ जाती है—वसीली उच्च प्राथमिक के बच्चों के बीच एक बार और आए और उनकी गहराइयों में पैठ कर कुछ दे—यह माध्यमिक उच्च माध्यमिक महाविद्यालय अथवा महाविद्यालय की नव किशोर, नव युवा और युवा पीढ़ी के साथ इसी प्रकार की यात्राएं करे और बाल हृदय की गहराईयों की तरह किशोर हृदय की गहराइयां तथा 'युवा हृदय की गहराइयों के अंतरतम तक उतर कर ऐसी ही अनेक शेष अनुभूति प्रतिमाएं विश्वपटल पर अंकित करे। नहीं, वसीली सुखोम्लीन्स्की के अतिरिक्त यह काम इतनी खूबी के साथ और कोई दूसरा नहीं कर सकता।

अप्रैल 1981

मनोवैज्ञानिक शहीदे आजम लेव विगोत्स्की

"मै तैयार हू   "

सहयात्री लियोंतिएव और लूरिया न उसके विषय म लिखन का इरादा किया था किन्तु व ऐसा नही कर सके, क्योकि भाई जब तक किसी मनोवैज्ञानिक के व्यक्तित्व की समग्रता और जटिलता की तह तक न पहुच जाय तब तक उसके विषय मे लिखा जाना सभव नही होता। काल लेविटिन के शब्दो म–'वह एक अनुभूतिक्षम मनोवैज्ञानिक, कलाओ का एक सुसस्कृत अध्येता, एक प्रतिभाशाली अध्यापक, साहित्य का एक महान पारखी एक अनुपम शैलीशिल्पी, विकलागो के अध्ययन म एक विचक्षण शोधकर्ता एक कल्पनाशील प्रयोगधर्मी, एक चितनशील सिद्धातकार निश्चय, ही वह यह सब कुछ था। कि तु इन सबसे बढकर वह एक अद्भुत विचारक था।

एल एस विगोत्स्की का जीवन घटना प्रधान नही था—वह अ तर्वस्तु प्रधान था। वह वास्तव मे आत्मा का अथक अ वेषक था। उसके अनुसार किसी व्यक्ति की स्वचेतना अथवा उसके ज्ञान की यात्रिकता और दूसरो के ज्ञान की यात्रिकता समरूप होती है 'दूसरो की मन स्थिति को समझने के लिए परपरागत सिद्धात यह मानकर आगे बढते हैं कि वह अज्ञेय है अथवा एक या दूसरे प्रकार की ऐसी परिकल्पना से आरभ करते हैं जो एक कपटपूर्ण रचनातत्र को बनाने की तलाश भर होती है। यह तत्वत वही होती है जो सवेदना और अनुरूपता के सिद्धात म निहित है। हम भ्रम को तोडना होगा।

एक जगह विगोत्स्की ने कहा है कि—"हम दूसरो के बारे मे उतना ही सीखते हैं जो हम स्वय अपने बारे मे सीखते हैं दूसरो के क्रोध को समझने के माध्यम से मैं स्वय अपने ही क्रोध को पुनरुत्पादित करता हू। दर असल इसका विलोम ही सत्य क अधिक निकट है। हम स्वय के प्रति सावचेत होते हैं क्योकि

हम दूसरा के प्रति सावचेत है और क्योंकि हम अपने प्रति जो हैं दूसरे (प्रति भी वही हैं।"—इस तरह वह आग बढा।

लेव विगोत्स्की का जन्म 5 नवम्बर 1896 म बायलोरूस की राजधा मिन्स्क के निकट ओरशा नामक उपनगर म हुआ था। उसके पिता गोमेल में यूनाइटेड बक क विभागाध्यक्ष और एक इश्योरेंस सोसाइटी क प्रतिनिधि थ। उसकी मा अपनी भाषा के अलावा जमन भाषा बहुत अच्छी तरह जानती थी और हेन की कविताओं को बहुत पसन्द करती थी। वह एक सुसस्कृत और उदार महिला थी जबकि उसके पिता का स्वभाव प्रशासकीय रूखापन लिए था। लव विगोत्स्की अपने आठ भाई बहनो मे दूसरा था और विशेषतौर पर अपनी बहन जिना के अधिक निकट था जो उससे 18 महीने छोटी थी। अपन पिता क अध्ययनकक्ष म बच्चे अपनी सब प्रकार की बठको का आयोजन किया करत और कभी कभी उनके मित्रदल भी वहाँ आकर इकट्ठे हो जाया करत। भोजनकक्ष भी कई बार वाद विवाद कक्ष बन जाया करता और समोवार पर सवाद-सगोष्ठी बच्चो की मानसिकता की सरचना म अहम भूमिका अदा किया करती। मा, बाप और उनके मित्र भी कई बार बहसो म हिस्सा ले लिया करत थ। इस प्रकार क वातावरण ने विगोत्स्की के निर्माण की नींव रखी थी। 15 वष के किशोर विगोत्स्की ने गम्भीर विचारगोष्ठियो की अध्यक्षता करने की महारत हासिल करली थी क्योंकि वह प्रत्येक गोष्ठी से पहले उसमे रखे जाने वाले सवाल वि दुओ की पूरी तयारी किया करता था।

वह एक ओर शतरज का अच्छा खिलाडी था तो दूसरी ओर रगमच और काव्यमच का सक्रिय भागीदार और आलोचक भी। सन् 1913 म उसने गोमेल शहर स स्वणपदक लेकर जिम्नाजियम पारित किया तथा मास्को विश्वविद्यालय मे प्रविष्ट हुआ। शायावस्की क जनता-विश्वविद्यालय म कानून की डिग्री हासिल करने और मनोविज्ञान तथा दशन म एक पाठ्यक्रम पूरा करके सन 1917 म वापिस गोमेल म आकर स्कूल म साहित्य और मनोविज्ञान पढाने लगा। वह नाटकीय मच म कक्षाए लगाता था और प्राय साहित्य और विज्ञान पर भाषण दिया करता था तथा गोमेल शिक्षक महाविद्यालय की मनोविज्ञान प्रयोगशाला को व्यवस्थित किया करता था। सन् 1924 म विगोत्स्की ने रोजा स्मखोवा से शादी की जिसने किसी भी कठिन परिस्थिति म उदासी को अपने पास नहीं फटकने दिया।

विगो स्की न सन 1924 म ही मास्को मे अपन जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काय आरम्भ किया। पहले मास्को के मनोविज्ञान सस्थान और बाद म विकलाग अध्ययन सस्थान म। इसी अवधि मे उसने नरकोम्प्रोस म मानसिक और शारीरिक दृष्टि से क्षतिग्रस्त बच्चा की शिक्षा के विभागाध्यक्ष क रूप मे काम किया और क्रुप्स्काया कम्युनिस्ट शिक्षा अकादमी और लेनिनग्राड म शिक्षा सस्थान म अध्यापन काय किया। इसी अरसे म विगोत्स्की ने मनोविज्ञान और विकलागो के अध्ययन के क्षेत्र म कायरत बहुत से युवा शोधकर्मियो को अपने इर्दगिर्द इकट्ठा किया, जिनम से उसके बहुत स अनुयायी आज प्रमुख सोवियत वैज्ञानिक है।

केवल 37 वष की अल्पायु म ही विगोत्स्की ने 200 वैज्ञानिक रचनाए लिख डाली जिनम Consciousness As a Behavioral Problem, Eeducational Psychology, The Development of Voluntary-Attention in childhood, Essays in the History of Behaviour (Jointly with Luria) Thought and Speech, Selected Psychological Studies, The Development of Higher Psychic Functions and The Psychology of Art इत्यादि प्रमुख है। मत्यु स कुछ समय पहल विगोत्स्की को National Institute of Experimental Medicine म मनोविज्ञान विभाग का अध्यक्ष बनाने का आमत्रित किया गया, कि तु 11 जून 1934 ई को विगोत्स्की क्षय ग्रस्त होकर चल बसा।

'मनोविज्ञान के प्रश्न' पत्रिका न आज स कुछ वष पहले अपन एक अक म लिखा था कि- नि सदेह सोवियत मनोविज्ञान के इतिहास म लव विगोत्स्की का एक अत्यत विशिष्ट स्थान है। यह वही था जिसन मनोविज्ञान क आगामी विकास क लिए नीव रखी और अनक बातो म तो उसकी वतमान स्थिति का निर्धारिन किया मनोविज्ञान का काई भी ऐसा क्षेत्र नही रहा जिसे विगोत्स्की न अपना महत्वपूर्ण योग न दिया हो। कला मनोविज्ञान, सामा य मनोविज्ञान, विकास मनोविज्ञान, शिक्षा मनोविज्ञान, विकलाग बच्चा का अध्ययन विज्ञान तथा विकृति और तत्रिका मनोविज्ञान आदि सभी म उसन नई ऊर्जा का सचार किया।

विगोत्स्की न शिष्यो और अनुयायियो की इतनी लम्बी कतार खडी करदी कि जिसने मनोविज्ञान की सारी दुनिया का हिलाकर रख दिया। आज विश्व का

कोई ऐसा कोना नही बचा है जो विगोत्स्की मनोविज्ञान चिंतनशाला से अप्रभावित रह गया हो। अमरिका और अन्य पश्चिमी देशो की समाज व्यवस्थाओं ने पूर्वाग्रहग्रस्त होकर लगभग आधी शताब्दी तक विगोत्स्की और उसके अनुयायियों की देन की जानकारी से अपना आपको महरूम रखा, किन्तु ज्यो ज्यो दुनिया के उन हिस्साम विगोत्स्की की रचनाए पहुंची त्यो त्यो वहा के मनोवैज्ञानिक विगोत्स्की धारा के प्रवाह म बहने लग। शिकागो विश्वविद्यालय के सामाजिक चिंतन और दर्शन के प्रोफेसर स्टीफन टाल्मिन, अमरिका के जकोब्सन और रॉकफेलर विश्वविद्यालय न्यूयार्क के प्रोफेसर माइकल कोल जसे अनेक मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक इसके कुछेक उदाहरण हैं। जकोब्सन पहले पश्चिमी मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने विगोत्स्की की 'खोज' की थी।

विगोत्स्की-चिंतनशाला के मनोवैज्ञानिको म प्रमुख रूप से उल्लेखनीय लियोन्तिएव, एलेक्जेण्डर लूरिया, एलेक्जण्डर मश्चेर्याकोव और वसीली डविडाव हैं ही जिनसे अब सारा मनोविज्ञान जगत सुपरिचित हो चुका है। इनके साथ साथ बी जी अनानिएव, बी आर्ट अग्निन, ई वी गुरियानोव, एन बी ना कोव, ए वी जापारोजेट्स वी वी जीर्नाकिन पी आई जि चेको जो एन कोस्युक, ए ए स्मिनोंव, वी एम टप्लोव, पी ए शेवारेव और डी वा एल्कोमिन और महिला मनोवैज्ञानिको म बो ज़ोविच लिडिया लविना रोसा, मारोजोवा नटाल्या साल्विना लिया स्लाव्स्काया यवगनिया और स्वेर्दलोवा ल्यूद्मोव आदि। अमरिका म प्रसिद्धि पाने वालो म ए सोकोलाव भी है। एल एल रुबिस्टीन एव लियोन्तिएव तो विगोत्स्की विचारो को आगे बढ़ान वालो म रहे ही हैं तथा शिक्षा मनोविज्ञान म पी या गाल्पेरिन एन एफ ल्योविनन, एन एफ कोरोल्योव नीना टेलिजिना तथा अन्य अनेको न विगोत्स्की धारा का विकास किया।

उसको बचपन से जानने वाले 'युग और दिवस' के सहचिंतक समियोन डाब्किन ने अपने संस्मरण म विगोत्स्की के अन्य गुणो के अलावा उसकी वक्तत्व कुशलता की ओर भी संकेत किया है। पेटोवस्की विगोत्स्की को 'विशिष्ट वैज्ञानिक', जकोब्सन उसे 'महान वैज्ञानिक', टाल्मिन ने उसे Mozart of Psychology या मनोविज्ञान की शमा का परवाना कहा, श्चेडोविटस्की न उसे इतिहास के परिप्रेक्ष्य म देखा, यारोशेव्स्की ने उसे मार्क्सवादी मनोविज्ञान का जन्मदाता माना माइकेल कोल के अनुसार वह किसी अवसरवादी द्वारा की जाने वाली मार्क्सवाद की तोतारटत स कोसो दूर रहनेवाला मार्क्सवादी मनोवैज्ञानिक

था, डेविडोव उसे मनोविज्ञान का सुप्रसिद्ध पद्धतिवैज्ञानिक करार देता है, यटश्क के अनुसार उसने संकेत प्रणालियों को मनोविज्ञान के धरातल पर खड़ा करने का काम किया, लूरिया ने उसे मनोविज्ञान के लिए नए और अभूतपूर्व सदर्शों का उद्घाटन करने वाला स्वीकार किया है और लियोंतिएव ने विगोत्स्की को मनोविज्ञान के अंतर्राष्ट्रीयकरण का विधाता माना है।

इस महान विगोत्स्की के निर्माण की पृष्ठ भूमि को किसी हद तक समझा जा सकता है। इसकी अपनी अंतर्मुखी प्रकृति थी जिसमें जिज्ञासाओं का उतार चढ़ाव था, फिर माँ-बाप और शालीन पारिवारिक वातावरण जिसमें विचार विमर्श और वाद विवाद गतिविधियों की अनवरतता थी, शतरंज-साहित्य ललित कलाओं रंगमंच और सौन्दर्य और कारुण्य अनुभूतियों में उद्भूत संवेदना थी, गम्भीरतम समस्याओं की तह तक पहुँचने की उसकी प्रकृति और साधना थी और इसके साधन के रूप में रातदिन चलनेवाला अध्ययन-अध्यापन चक्र, पृष्ठभूमि में श्रमिक हलचलों का होना और सबसे बढ़कर ऐतिहासिक-भौतिकवाद के विज्ञान का उभरना इसके आधार पर गठित विश्व की महानतम घटना अक्टूबर क्रांति और अक्टूबर क्रांति के द्वारा पेश की गई प्रत्यक्ष क्षेत्र की चुनौतियाँ जिनमें शिक्षा और मनोविज्ञान की समस्याएं भी थी—शामिल थी। इसके अतिरिक्त लेनिन जैसी समग्र प्रतिभा का सर्वतोमुखी प्रभाव, देश के निर्माण की विविध शक्तियाँ और मनोविज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिपूर्व के क्रांतिकारी लाइनाविक सेचेनोव पाव्लोव, बेख्तेरेव, उख्तोमस्की तथा अन्य प्रकृति विज्ञानिकों और फिजियोलोजिस्टों के कार्य, प्रयास या रचनाएं आदि के पूर्वभूमिकाएं भी थीं जिन्होंने इस प्रतिभा की संरचना की थी।
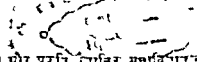
पहले पहले अंतर्विरोध भाववादी और प्रकृति वैज्ञानिक मनोविज्ञान तथा वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक मनोविज्ञान में भी थी। फिर पश्चिमी यूरोपीय और अमरीकी विज्ञान में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ उभरीं जिन्होंने आध्यात्मवादी भावनावादी या मानसवादी मनोविज्ञान के विरुद्ध मोर्चा लिया था। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में अमरीका में व्यवहारवाद का उदय हुआ जिसका नारा वाटसन था—'मनोविज्ञान का विषय व्यवहार है न कि चेतना।' व्यवहारवाद ने मनोविज्ञान में क्रांतिकारी परिवर्तन की आशा दी कि उस वह परम्परागत आत्मवादी-भावनावादी-मानसवादी मनोविज्ञान का नाश करेगा ... किन्तु वह निरा मस्तिष्करहित और चेतनारहित विज्ञान ... नाम न

9732 9750
1355

के और कुछ नही कर सका क्योकि व्यवहारवाद कभी भी खडश अनुसधानो को एकसूत्रित नही कर सका तथा अपने आपको सामाजिक अनुभवो के परिप्रेक्ष्य म खडा नही कर सका। दूसरी ओर फायडवाद ने मनोविश्लेषण व आवरण म मनोवैज्ञानिको को नशे मे धुत कर दिया जिससे उसकी स्वय की सामथ्य भी क्रातिकरण की प्रक्रिया को सफल नही बना सकी।

अब, आध्यात्मवादी–भावनावादी–आदशवादी परम्परागत मनोविज्ञान तथा व्यवहारवादी और फ्रायडवादी मनोविज्ञानो द्वारा पदा की गई जडताओ, यांत्रिकताओ और फायडवादी मोहकताओ और अनक प्रकार की अन्य भ्रातियो क विरुद्ध निमम सघष करके मनोविज्ञान को वयक्तिक–सामाजिक–एतिहासिक सक्रियताओ के आधार पर खडा करके एक गतिशील विज्ञान क रूप म उसका पुनरुत्पादन करना था।

इस कुहर को हटात हुए विगात्स्की न यह मत प्रतिपादित किया था कि 'श्रम और उपकरण का प्रयाग मनुष्य के व्यवहार स्वरूप को बदल देता है और मनुष्य को इतर जीवधारियो स भिन्नता प्रदान करता है। मनुष्य की यह भिन्नता उसकी सक्रियता के छिप हुए स्वरूप म निहित है। छिपाव इसलिए सम्भव होता है कि मनुष्य जिस प्रकार अपन बाह्य व्यावहारिक क्रियाकलाप म उपकरण का उपयोग करता है, वसे ही आतरिक मानसिक क्रियाकलाप मे उपकरण का उपयोग करता है वसे ही आतरिक मानसिक क्रियाकलाप म सकेता (शब्द, सख्या आदि) का उपयोग करता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि स उपकरण और सकेत के बीच समानता इस बात म है कि वे दोनो ही भीतर छिप हुए काय को सम्भव बनात है। उनके बीच अन्तर इस बात म है कि उनकी दशाए भिन्न भिन्न हैं। उपकरण बाहर की ओर लक्षित होता है, वस्तु के रूप म परिवतन लाता है और मनुष्य के प्रकृति पर नियत्रण पाने की ओर निर्दिष्ट बाह्य क्रियाकलाप का साधन होता है। इसके विपरीत सकेत भीतर की ओर लक्षित होता ह, वस्तु म कोई परिवतन नही लाता और मनुष्य के व्यवहार पर नियत्रण परस्पर सम्बद्ध है, चूकि मनुष्य द्वारा प्रकृति का परिवतन स्वय उनकी अपनी प्रकृति को बदल डालता है। सकेतो (सहायक साधनो) का प्रयोग अर्थात छिप हुए क्रियाकलाप मे सक्रमण मनुष्य की समस्त मानसिक सक्रियता का वस ही बदल देता है, जसे कि उपकरणो का प्रयोग शारीरिक अगो की सहज क्रिया का परिवतन करता है और मानसिक सक्रियता की सम्भावनाए बढाता है।

सांस्कृतिक विकास के सामा य आनुवशिक नियम को परिभाषित करत हुए विगोत्स्की का कहना है–" वच्चे के साम्कृतिक विकास म हर क्रिया दो वार, दो धरातला पर "ामन आती है–पहले सामाजिक धरातल पर और फिर मना वैज्ञानिक धरातल पर पहल लोगा के बीच, एक अ तमानसिक प्रवग के रुप म, और फिर वच्चे के अ दर एक अत मानसिक प्रवग के रूप म ।' तथा 'सभी प्रकार की उच्चतर मानसिक क्रियाए अपन विकास के दौरान अनिवायत बाह्य अवस्था से गुजरती है, क्योकि वे आरम्भिक तौर पर सामाजिक क्रियाए होती है"

विगोत्स्की सभी उच्चतर क्रियाओ क पीछे मूलत सामाजिक सम्ब धा का लक्षित करता है । उसक अनुसार मनुष्य की मानसिक प्रकृति वस्तुत उन सामाजिक सम्ब धा की समष्टि ही ह जा भीनर अ तरित किए गए है और व्यक्ति व के काय तथा उसक सरचनात्मक रुप वन गए है । इस प्रकार विगोत्स्की के मनो वैज्ञानिक सिद्धा त म मनुष्य क सामाजिक प्राणी होन के मावसवादी विचार न एक मूत्त रूप ग्रहण कर लिया । जब वि ो स्की विवाद को विचारा का ज मदाता मानना ह ता उसका सकत अत सम्ब ध और अन्तर्विरोध की ओर लक्षित हाना है ।

अक्टूबर क्रान्ति न विश्व क हर विदु को इसलिए प्रभावित किया कि उसक पीछे एक विज्ञान सम्मत मावसवादी दशन था । इस क्रान्ति म पहल मना विज्ञान की पृष्ठभूमि म किसी सुनिश्चित दशन क न ान म वह अपनी रचना प्रक्रिया के माध्यम स अपन स्पष्ट और वज्ञानिक स्वरूप को टटालता रहा । इस महान विश्व क्रांति ने मनोविज्ञान क क्षेत्र म भी यह चुनौती पश कर दी कि उस (मनाविज्ञान क) मावसवादी दशन के एक प्रमुखतम अग एतिहासिक भौतिकवाद के आधार पर एक सघन और सुनियोजित विज्ञान क रूप म क्स विकसित किया जाय जा परम्परागत मनाविज्ञान क आत्मनिष्ठावाद अथवा [illegible] और प्रत्यक्षवाद क खिलाफ तथा इसी तरह मानस का [illegible] सामाजिक सक्रियता से भिन्न करक विश्लेषित करने की प्रवृत्ति क [illegible] और साथ ही यह भी आवश्यक था कि उस सरलीकृत यांत्रिकतावादी [illegible] परास्त किया जाय तो मानसिक घटनाओ क विशिष्ट गुणा और [illegible] लिए वज्ञानिक उपागमा क लिए घातक सिद्ध हा चुका है ।

विगोत्स्की के अनुसार व्यवहारवाद क्रान्ति क [illegible] वादी मनोविज्ञान इसी धरती पर सजा म फलत तथा उसे [illegible]

विक मनाविनान का स्थान ले लिया। दर असल, व्यवहारवादी, मनोविज्ञान अमेरिका म और उसी तरह रूस मे भी दो प्रकार के मनोविज्ञाना' (व्यवहारवादी और आध्यात्मवादी) के बीच सघप का विस्तार ही था।

जब विगोत्स्की न मनोविज्ञान को एक नवीन वज्ञानिक आधार पर खडा किया तो लियोंतिएव ने कहा था–' ता भी केवल यही वह पकड है जो किसी को व्यक्तित्व के सामाजिक एतिहासिक सारतत्व की ओर अग्रसर करती है। दूसरे शब्दो म व्यक्तित्व समाज म प्रकट होता है मनुष्य इतिहास म प्रवेश करता है (और बच्चा जीवन म प्रवेश करता है) वह कुछ गुणो और अभिरुचियो से सम्प न होना है, कि तु व्यक्तित्व केवल मानव के द्वारा दूसरे लोगा के साथ सामाजिक सम्ब धा म प्रवेश किए जान पर ही उभरता है। अत व्यक्तित्व मानवीय सक्रियता का पूववर्ती नही हो सकता, व्यक्तित्व को चेतना की ही तरह समाज के अ य सदस्यो के म य मनुष्य की सक्रियता के द्वारा उत्पन्न किया जाता है। उस प्रक्रिया का अध्ययन करना व्यक्ति व के विषय म एक सही वज्ञानिक समझ की कुजी है।'

मनाविनान क क्षेत्र म इस सघप म कूद पडने का, इसम पहलकदमी करने का काम किया था इस नौजवान, कि तु अपने समय के गम्भीतम विचारको म से एक लेव विगोत्स्की ने। काम आसान नही था–जान लेवा था। विगोत्स्की ने सबसे पहले यह महसूस किया कि आत्मपरक भाववादी अथवा आन्शवादी मनो विनान यांत्रिक व्यवहार के चक्र म फसकर इस बात को नही समझना चाहता कि ठीक जसे बिना मानस क कोई व्यवहार सम्भव नही होता वस ही बिना व्यवहार किसी मानस या चेतना की भी सम्भावना नही होती।' इसके साथ विगोत्स्की का यह भी विश्वास था कि मानवीय चेतना क विकास म प्रमुख तत्व सामाजिक अनुभव का आत्मीकरण होना है। अत मानव मनोविनान को एक सामाजिक और ऐतिहासिक अथवा अ तर्राष्ट्रीय अवधारणा प्रदान करन म भी विगोत्स्की का प्राथमिक और मह वपूण योगदान रहा। उपकरण, उसके उपयोग और सकत की अवधारणाओ का भी इसी सदभ म समझा जा सकता है।

क्योकि सघष लम्बा था और जीवन थोडा अत विगोत्स्की न मदान म पांव रखते ही इसकी जटिलता को भाप लिया था और इसी के अनुकूल उसने अपनी कायनीति निर्धारित कर ली थी। इसक तहत उसन एसे सहयात्रियो का

ताशक"
15 अप्रैल 1929

'मेरे प्यारे दोस्तो",

तुम इस काम को विशालता को मानने लगे हो जो उस मनोवैज्ञानिक के सामने उपस्थित है जो मानव-चेतना के इतिहास को पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयास कर रहा है। तुम अनात क्षेत्र म प्रवेश कर रहे हो।

जब मैंने इसमें पहले तुम्हारे भीतर ध्यान से देखा तो मेरी प्रतिक्रिया आश्चय भरी थी। और आज, मुझे इसमें विस्मय हो रहा है कि प्रस्तुत परिस्थितियों के और अवशिष्ट अनिश्चयों के सामने रहते हुए भी तुम जैसे शुरुवाती लोगों ने इस तरह के कठोर माग को चुना है। मैं बिल्कुल स्तंभित था जब अलेक्जेंडर रोमानोविच लूरिया वह पहला व्यक्ति था जिसने अपने समय में यह रास्ता अख्तियार किया, और जब अलेक्सेई निकोलायेविच लियोन्तियेव ने उसके पदचिह्नों का अनुसरण किया। मैं यह देखकर प्रफुल्लित हो गया हूँ कि मैं अब अपने अग्रगामी पथ में अकेला नहीं हूँ और ऐसे ही हम अब इस राह में केवल तीन सहयात्री ही नहीं हैं अपितु पाँच और अधिक वीर और साहसी आ गए जान के इस विशद माग में उतर पड़ी है।

समकालीन मनोविज्ञान के सामने उपस्थित चुनौतियों का अहसास ही (क्योंकि इस क्षेत्र में हम एक क्रांतिकारी मोड़ के युग में जी रहे हैं) मेरी सर्वोपरि मूल भावना है। और वह भावना एक अनन्त उत्तरदायित्व को सामने ले आती है—एक गम्भीरतम लगभग दुःसाध्य (शब्द के भव्यतम और सर्वाधिक वास्तविक अर्थ में) दायित्व भार को उन सब लोगों के कंधों पर रख देती है जो विज्ञान की किसी नयी शाखा में शोध काय कर रहे होते हैं—और विशेष रूप से व्यक्ति के विज्ञान की शाखा में। तुम्हें अपने आपको हजारों बार जाँचना पड़ेगा और किसी निर्णय पर पहुँचने से पहले अगणित अग्नि परीक्षाओं को झेलना होगा, क्योंकि यह काँटों भरा रास्ता सम्पूर्ण आत्म बलिदान की माँग करता है।

तुम्हारा
एल विगोत्स्की

इस काटा भर सघप पूए रास्त मे जान हथेली पर रखकर विगोत्स्की चल पडा था। भूख प्यास, नीद ग्रारा॰म, सुविधा-ग्रसुविधा ग्रौर सुख दु ख की भा परव ह न करत हुए, रात दिन मानस की ग्रन त गहराइया की थाह लेते हुए' ग्रध्ययन दर-ग्रध्ययन मे निमग्न रहत हुए, प्रयोग दर प्रयोग मे व्यस्त रहत हुए, परम्परा-दर-परम्परा के जाल को चीरते हुए, नए माग नई पद्धति को तला शत हुए ग्रौर नए सघपकारियो को प्ररित ग्रौर प्रशिक्षित करत हुए सक्रिय सक्रिय ग्रौर ग्रधिकाधिक सक्रिय होता गया। इस ग्रत्यधिक सक्रियता न उस क्षयग्रस्त कर दिया ग्रथवा यो कह सकत है कि दृष्टिहीनो को ज्ञानदृष्टि देने वाल क्षमताहीनो को नई क्षमताए दन वाले ग्रौर ग्रपनी समग्र शारीरिक-मानसिक क्षमताग्रो का भाक देन वाल विगोत्स्की न मौत की कोई परवाह नही की। ग्रद्भूत उदाहरण है यह ग्रात्मबलिदान का, शहादत का ग्रौर क्षयग्रस्त ग्रवस्था म रक्त उगलत हुए, बिना रुकन का नाम लिए कायक्षेत्र म बढत जाने का। एक दिन ग्रथात् 11 जून 1934 को मौत ने ग्राकर उस हसीन सतीस वर्षीय नोजवान को साथ चले ग्रान का सकेत दिया ग्रौर उसन सब कुछ समेटते हुए कहा-'हा, मैं तयार हू।' ग्रौर वह चल पडा।

सन् 1985 ई

किशोर अपराधियो का मसीहा : ए एस. माकारेंको

विश्वविख्यात लेखक मक्सिम गोर्की ने कालोनी को देखकर कहा–'तुम्हे आश्वस्त करता हू कि तुम्हारा अनुपम सफल शैक्षिक प्रयोग वास्तव मे विश्वजनीन महत्व का है। यह आवश्यक है, आग्रहपूर्ण है कि तुम इसका सदेश दुनियाभर के प्रगतिशील शिक्षको तक पहुचाओ—जितना जल्दी हो सके उतना ही अच्छा ।'

ए एस माकारेको, जिस 1 अप्रैल 1982 को रूसके 43 वे स्मृति दिवस पर सब जगह परम सम्मान के साथ याद किया गया उसी को गोर्की ने उपयुक्त शब्दो मे आश्वस्त किया था। वह रूस की सक्रमणकालीन परिस्थिति 13 मार्च, 1887 ई मे खार्कोव गुबेर्निया के बेलोपोल्ये नामक नगर मे एक मजदूर परिवार मे पैदा हुआ था। यह वह समय था जब रूस मे जारशाही के साथ फिर सत्तात्मकता हावी हुई हो रही थी और वह राष्ट्र करवट बदलने की भूमिका वहन करता जा रहा था।

माकारेको उसी रूसी तालस्ताय, लेनिन, गोर्की और लूनाचार्स्की की श्रृंखला की एक महत्त्वपूर्ण कडी था, जिसने आगे चलकर गात्पेरिन, सुखोम्ली स्की और नीना तलीजिना का मार्ग प्रशस्त किया।

वह किशोरावस्था पार कर हो रहा था कि सन् 1905 ई मे प्रथम रूसी क्राति का प्रादुर्भाव हुआ। तब तक वह ओजस्वी प्रतिभा का धनी अपने शैक्षिक कौशल का परिचय दे चुका था, जिसके फलस्वरूप उसे क्रेमे चूग (उक्रइना) के एक उपनगर क्र्यूकोव की एक स्कूल मे रूसी भाषा और ड्राइग पढाने का कार्यभार सौपा गया। तब से लेकर यह क्रातिकारी शिक्षक लगातार 34 वर्ष तक एक अभूतपूर्व शिक्षा की इमारत को खडी करने मे निरतर प्रयत्नशील रहा।

माकारेंको के शिक्षक जीवन का सन् 1905 से 1914 तक का 9 वर्ष का कार्य काल उसके आत्मविश्वास की बुनियाद को निर्धारित करता है। प्रथम वर्ष में ही माकारेंको ने स्कूल और बच्चों के परिवारों के बीच एक गहरा आत्मिक संबंध स्थापित कर लिया शिक्षा को स्कूल की संकीर्ण चारदीवारी से बाहर निकाल कर समाज की ओर अग्रेसित कर दिया—गत्यावरोधक जकड़नों को तोड़ दिया। दूसरी ओर उसी स्कूल की इमारत में रेल मजदूरों की राजनीतिक सभाएं करवाकर उनका क्रांतिकारी राजनीतिकीकरण करने में एक उपयुक्त माध्यम का कार्य किया। इसी प्रकार रेलवे स्कूलों में पढ़ने वाले शिक्षकों की कांग्रेस का संचालन करके शिक्षकवर्ग को भी इन्कलाब में हिस्सा लेने के लिए राजनीतिक तौर पर प्रशिक्षित किया।

दोनों स्थायी स्कूल के छात्रों को बड़े बड़े नगरों में ले जाकर उन्हें समाज की व्यापक उथल पुथल का सीधा अनुभव प्राप्त करवाना और साथ ही नाटकों और संगीत समारोहों को आयोजित कर उन्हें साहित्यिक एवं सांस्कृतिक धरोहरों से परिचित कराना तथा साथ ही साथ भावी समाज के निर्माण के लिए उत्प्रेरित करना माकारेंको का ही अपना अथक परिश्रम था। सन 1914 ई से ही यह नवयुवक शिक्षण कार्य के बाद अतिरिक्त समय में कहानियां और कविताएं लिखने लगा था जिनका उपयोग वह अपने दैनिक शिक्षण कार्य में किया करता था।

सन् 1917 ई में माकारेंको ने सम्मान स्नातक की उपाधि प्राप्त की। महान् अक्तूबर समाजवादी क्रांति का विश्व पटल पर इसी साल प्रादुर्भाव हुआ किन्तु प्रतिक्रांतिकारी शत्रुओं ने देश को गृहयुद्ध में धकेल दिया और एक बार अस्त व्यस्तता का वातावरण दिखाई देने लगा। तीसरा दशक नवोदित सोवियत देश के लिए बहुत कठिन समय था। गृहयुद्ध की विभीषिकाओं और आर्थिक बर्बादी के दौर से गुजरे हुए देश में अनेक बच्चे बेघरबार और अनाथ हो गए थे। सोवियत राज्य ने इन बच्चों को नवजीवन प्रदान करने का संकल्प लिया। ए माकारेंको ऐसे ही अनाथ बच्चों के लिए ही निर्मित श्रम विद्यालय के इंचार्ज थे। इन अभागे और अपराधी बालक बालिकाओं के जीवन को कैसे नई दिशा दी जाय यह बहुत जटिल समस्या थी। माकारेंको के मन में इनके प्रति असीम विश्वास और सम्मान की भावना थी। इसी के बल पर वे अपने असम्भव से लगने वाले काम में जुट गए। उन्होंने यह निश्चय किया कि इन्हें मां बाप का स्नेह और परिवार का सौहार्दपूर्ण वातावरण लौटाया जाना चाहिए। अतः अपनी समुदाय योजना को पारिवारिक स्वरूप देकर वे इसमें कारगर साबित हुए।

महान क्रांति की द्वंद्वात्मकता के दौर में पनी माकारेंको की शिक्षा अपने पूरे यौवन में विकसित होने लगी। पुराने स्कूलों को अब नये समाज की नई शिक्षा के अनुरूप परिवर्तित करने का आन्दोलन सफल करता माकारेंको इस आन्दोलन के अग्रणी स्तोम प्रमुख भागीदार बनाकर सामने आए। यहीं से माकारेंको के व्यावहारिक प्रयोग चालू हुए। छात्रों को ... समूहों में संगठित करने के उद्देश्य से उन्हें टोलीनायकों के नेतृत्व में अलग टोलीबद्ध किया गया और उनमें पाठ्य और पाठ्येतर क्रियाकलापों का सुमर्था रूप में बांटा गया। इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण प्रयोग शिक्षाशास्त्र की पुस्तकें पढ़कर चालू नहीं किए गए थे, बल्कि सामाजिक परिस्थितियों और प्रयत्नों उद्भूत हुए थे।

अनातोली लूनाचार्स्की ने कहा था कि 'जब हम सर्वहारा राज्य में ... की बात करते हैं तो उसका उद्देश्य उस शिक्षा का सर्वथा उन्मूलन करना है जो शोषकवर्ग और प्रतिक्रांतिकारियों को लाभ पहुंचाती है। माकारेंको गोर्की श्रम कालोनी को ऐसी आदर्श के अनुरूप व्यवस्थित किया। यह कालोनी थोड़े ही समय में एक असाधारण शैक्षिक संस्था के रूप में विकसित हो गई। अनाथ बच्चों, किशोर अपराधियों के लिए जो काम ए०एस० माकारेंको ने किए उसकी दूसरी मिसाल विश्व भर में और नहीं मिलती। इस कालोनी में किए गए प्रयोगों व अनुभवों ने दुनिया भर के शिक्षाशास्त्रियों और शिक्षकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। जिस प्रकार रूस के सामने महान अक्तूबर क्रांति से पहले समाजवादी निर्माण का सरचनात्मक अनुभव विरासत में उपलब्ध नहीं था, सब कुछ पुराने जर्जर ढांचे को तोड़कर नया भवन खड़ा करना पड़ा था, और दुनिया के सामने एक विरासत कायम करनी थी—जिसे उसने बखूबी कायम की, उसी प्रकार माकारेंको जैसे रूस के अनेक शिक्षाशास्त्रियों ने नई समाजवादी शिक्षा को मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांतों के आधार पर एक सुसंगठित स्वरूप प्रदान करने में पहल की। यह वास्तव में एक बहुत बड़ा क्रांतिकारी मोड़ था शिक्षा के क्षेत्र में। उत्पादक श्रम को राजनीतिक, शारीरिक और सौंदर्यबोध की शिक्षा के साथ जोड़कर उसे संपूर्ण शैक्षिक प्रणाली का आधार बिन्दु बनाना शिक्षा समाज में सर्वहारावर्ग की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी। इसके लिए माकारेंको की सराहना करते हुए मक्सिम गोर्की ने कहा था—

"जीवन के क्रूर और उपेक्षापूर्ण आघातों से त्रस्त सैकड़ों बाल अपराधियों को संभावना से परे जाकर किसने बदल डाला, किसने उन्हें पुनर्शिक्षित करने में

सफलता प्राप्त की ?–इस प्रश्न का एकमात्र निश्चित उत्तर है इस कालोनी का व्यवस्थापक अथवा अधिकारी ए टोन -माकारेंको–निस्सन्देह एक महान शिक्षक। कालोनी के लड़के और लड़कियां स्पष्टतया उसे प्यार करते हैं और उसके विषय में इतने गौरवपूर्ण लहजे में बात करते हैं मानो उसे उन्होंने स्वयं ने ही इतना महान् बनाया हो।"

दुजेर्जी स्की कम्यून में माकारेंको ने आठ साल तक अनाथ बच्चों और किशोरों की देख-रेख करने का काम किया। कम्यून में समेकित समूह को संगठित करके उत्पादक श्रम में सन्निष्ट शिक्षा प्रणाली के बहुमूल्य व्यावहारिक प्रयोग किए गए। समूह को टालीनायकों की टालियों में विभाजित किया जाता था और तब अवधिपरक श्रम संयोजित किया जाता था। कर्मशालाओं में भरपूर शैक्षिक वातावरण उत्पन्न किया जाता था और किशोर अपराधियों के मानवीकरण की दिशा निर्देशित की जाती थी। इस शिक्षा प्रणाली का एक अतिरिक्त लाभ यह भी परिलक्षित हुआ कि कम्यून आर्थिक दृष्टि से पूर्णतया स्वावलम्बी बन गया। दुनिया में प्रसिद्ध 'फेद' ट्रेडमार्क कैमरा यहीं की देन है।

अपने जीवन के अंतिम सात वर्षों में '1930 का अभियान', 'जीवन की ओर, मां बाप और बच्चे' और 'कर्म जिए' जैसी अमूल्य तथा अनुभव सिद्ध शिक्षासाहित्य कृतियों की रचना करके माकारेंको ने एक दूसरा अनुपम शिखर आरोहित कर दिखाया।

- स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, 'हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। इधर के डी उशीन्स्की का कहना है–'यदि शिक्षा किसी व्यक्ति को हर पहलू से शिक्षित करना चाहती है तो उसे उसको सब प्रकार से समझना होगा।'–माकारेंको चरित्र निर्माण के सन्दर्भ में शिक्षा का अभिप्राय लेते हैं मानवीय व्यक्तित्व के कार्यक्रम मानवीय चरित्र के कार्यक्रम और चरित्र की उस धारणा से जिसके अन्तर्गत उन सभी गुणों को सम्मिलित कर लिया जाता है जो व्यक्तित्व की विशिष्टता है। अपनी इस सामान्य धारणा को स्पष्ट करते हुए माकारेंको ने कहा—

हम सुसंस्कृत सोवियत मजदूर को शिक्षित करना चाहते हैं। अतः इसका तात्पर्य यह है कि हमें उसे शिक्षा देनी चाहिए यदि सम्भव हो तो माध्यमिक

शिक्षा देनी चाहिए हम उसे शिल्पिक शिक्षा देनी चाहिए हमे उसे अनुशासन सिखाना चाहिए और उसे राजनीतिक दृष्टि से विकसित करना तथा मजदूर वर्ग, कोम्सोमोल और बोलशविक पार्टी का निष्ठावान सदस्य बनाना चाहिए। उसे एक साथी की आज्ञा पालन और साथी को आदेश देने का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। उसे परिस्थितियों के अनुकूल शिष्ट, कठोर, दयालु और निर्मम होना चाहिए। उसे सक्रिय संगठक होना चाहिए। उसमें सहनशीलता, आत्मनियन्त्रण और दूसरों को प्रभावित करने की योग्यता होनी चाहिए, यदि समूह से उसे दण्ड मिले तो उसे समूह का सम्मान करना चाहिए, उसके निर्णय को स्वीकार करना चाहिए और सजा भोगनी चाहिए। उसे हंसमुख, सजीव, देखने में चुस्त, मदद और निर्माण में सक्षम जीने और जीवन से प्यार करने में समर्थ होना चाहिए और खुश रहना चाहिए। और केवल भविष्य में नहीं, बल्कि अभी भी, प्रत्येक जीवन में सदैव उसे इसी प्रकार का व्यक्ति होना चाहिए।

कोम्सोमोल की तीसरी अखिल रूसी कांग्रेस में लेनिन ने जो विचार व्यक्त किए और युवकों के लिए काम की जो रूप रेखा प्रस्तुत की उसे माकारेंको और उसके साथियों ने अपने क्रियाकलापों का आधार माना। मार्क्स के शिक्षा सबंधी विचारों से वे पहले से ही लैस थे। कालोनी और दज़र्जीन्स्की कम्यून में इन्हीं आधार बिन्दुओं को लेकर वे आगे बढ़े। आगे चलकर अपने इन्हीं अनुभवों को साहित्यिक रूप देकर 'जीवन की ओर' और 'कैसे जिए' कृतियों में अंकित किया।

माकारेंको समाजवादी मानवतावाद के हामी थे। मनुष्य में उनका अदट विश्वास था और बच्चों और युवकों के प्रति अगाध स्नेह। वे अधिक से अधिक कठोर अपेक्षा रखते थे और उसके साथ ही पूरी तरह सम्मानजनक व्यवहार करने के हामी थे। यही वजह है कि अनाथ और किशोर अपराधियों को सुधारने और उनको समाजोपयोगी बनाने के कठिनतम काम को सफलतापूर्वक करके उन्होंने चमत्कारी परिणाम प्राप्त किए। तभी तो सन् 1932 के अन्त में दज़र्जीन्स्की कम्यून को देखने के बाद फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ ए हेरिओत ने कहा 'मैं भावविभोर हो उठता हूं आज मैंने वास्तविक चमत्कार देखा और यदि मैं इसे अपनी आंखों से न देख पाता, तो कभी भी इसमें यकीन नहीं करता।'

सभी समाजवादी तथा जनतन्त्रवादी लोगों पर शुरू में या बाद में शिक्षा को सामाजिक वातावरण के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रभाव परिलक्षित होता है।

जवाहरलाल नेहरू ने कहा था–'म समाजवादी राज्य म विश्वास करता हू और चाहता हू कि शिक्षा का इस उद्देश्य की ओर विकास किया जाये।' माक हाप-कि स शिशा के व्यापक अथ म निर्माणकारी प्रभाव का देख चुके थे और जेम्स एस रॉक का कहना था–'सामाजिक वातावरण से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नही है और व्यक्ति-व अथहीन शब्द ह, क्योकि इसी मे इसका विकसित और कुशल बनाया जाता ह।' डा एस राधाकृष्णन मानत थे कि शिक्षा का मनुष्य और समाज का निर्माण करना चाहिए। माकारेवा का समूचा जीवन इस ध्येय की प्राप्ति क लिए समर्पित था।

माकारेको का विश्वास था कि 'न सुधरने वाला कोई बच्चा नही होता।' हम जिनको अपराधी मानकर उपेक्षित करत है वह हमारी ही नादानी है।

वे उन्नत मानवीय मूल्यो की प्राप्ति के लिए विद्यार्थियो को अनक दलो म विभाजित करते थे। प्रत्येक दल का एक दलपति होता था। इस दलपति म आना मानन और आज्ञा देन की विशेषताए होती थी तथा जो मानसिक रूप स भी सर्वाधिक विकसित होता था-वह 'कमांडर' कहलाता था। इ ही दलो के माध्यम से समुदाय और व्यक्ति क बीच सम्पर्क कायम किए जात थे। यह बुनियादी इकाई लगातार एक दूसर के साथ मिलन-जुलन और काम करन, मत्री स्थापित करन, सामुदायिक हितो की रक्षा करन और पारस्परिक विचार विमश करन का साधन होती थी। इस प्रकार की इकाइयो का सम्ब ध कमाडरो की कौसिल, जनरल बाडी और कोम्सोमाल मे होता था। इस प्रकार की शिक्षा का कायक्रम एक सग्रथित रूप म परिचालित किया जाता था। उत्पादनकारी श्रम, सामूहिकता और व्यक्तित्व के बहुमुखी विकास को आधार मानकर बहुमुखी व्यावहारिक प्रयोग किए जात थ। इस प्रकार क प्रयोगो की साथकता का आभास जान डयूवी के इस कथन म भी मिल सकता है कि–सामाजिक वाताव रण म उसके किसी भी सदस्य की सभी क्रियाए आ जाती ह। इसका प्रभाव उतनी ही मात्रा मे वास्तविक रूप स शिक्षाप्रद होता ह, जितनी मात्रा म एक व्यक्ति समाज की सहयोगी क्रियाओ म भाग लता ह।'

छात्रो पर शिक्षक का हावी होना माकारेको का कतई स्वीकाय नही था। समुदाय और व्यक्ति क विकास म गतिमान सम वय स्थापन म माकारेको अथक रूप म सदव प्रयत्नशील रहत थे। माक्स क दशन, लेनिन द्वारा इगित कायक्रम की रूपरेखा और मक्सिम गोर्की द्वारा दी गई भावभूमि के सहार अपनी अनुपम

प्रतिभा का उपयोग करके उन्होंने जो प्रयोग किए वे रूस की समाजवादी शिक्षा के आधार स्तम्भ साबित हुए और अन्य समाजवादी देशों यथा जर्मन जनवादी गणतन्त्र, चैकोस्लोवाकिया, बुल्गारिया, हंगरी, पोलैंड, रूमानिया और मंगोलिया आदि ने उन्हें अपनी अपनी परिस्थितियों के अनुसार सहर्ष अपनाया। माकारेंको का साहित्य विश्वभर में गहन अध्ययन का विषय बन गया। भला माकारेंको के कार्यों और यथार्थ भूमि पर रचित उनकी अमूल्य रचनाओं की सफलता जैसा और कोई उदाहरण है इस शिक्षा जगत में ?

माकारेंको के गतिमान समन्वय सम्बन्धी विचारों का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। भारत में इसी युग में इसी प्रवाह में जवाहरलाल नेहरू भी सोचा करते थे और कहते थे–'शिक्षा से यह अपेक्षा की जाती है कि यह संतुलित मानव का विकास करे, बालकों को समाज के लिए लाभप्रद कार्यों को करने और सामूहिक जीवन में भाग लेने के लिए तैयार करे।'

माकारेंको जड़ता के कट्टर विरोधी थे। वे द्वन्द्वात्मकता और गतिशीलता में विश्वास रखते थे। वे परिस्थितियों का मूल्यांकन करके भावी शिक्षा का निर्धारण करने वालों में थे। किन्तु वे विशृंखलता और अराजकता को भी सहन नहीं करते थे। उनके विचारानुसार संकीर्णता और अराजकता दोनों ही शिक्षा, शिक्षक और समाज के लिए घातक सिद्ध होती हैं। व्यष्टि का समवेत विकास सम्भव तो है ही–श्रेयस्कर भी है।

शिक्षक के सम्बन्ध में माकारेंको की मान्यता है कि वांछित शैक्षिक प्रभाव पैदा करने के लिए शिक्षकों को अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति, संस्कृति और व्यक्तित्व से छात्रों को प्रभावित करते हुए निश्चित और व्यावहारिक शब्दावली में अपनी अपेक्षाओं को अभिव्यक्त करना चाहिए। आदर्शोन्मुख अपेक्षाओं में उपयुक्त होगा लचीलापन और अनुशासनोन्मुख अपेक्षाओं में रखनी होगी दृढ़ता और अनवरत सचेष्टता।

माकारेंको के साथ प्रसिद्ध पत्रकार और लेखक विक्टर फिंक ने अपने साक्षात्कार के प्रभाव को इन शब्दों में व्यक्त किया–" .. उसी क्षण मैंने यह महसूस कर लिया कि उसमें कुछ ऐसा है जो अटूट है, जो अडिग है और जो सक्षम है।'

माकारेंको की सफलताओं का श्रेय सब में वितरित हो जाना उनके

व्यक्तित्व की समाजो मुख उदात्तता का परिचायक है, इसे उनकी पत्नी गलिना माकारेंको न कितनी पनी दृष्टि से देखा है–'उस समूची व्यवस्था म माकारेंको के महत्व और उसके काम की ऊचाई का मूल्यांकन करना और उसकी उपयुक्त सराहना करना एकाएक बडा मुश्किल प्रतीत होता था, क्योंकि कालोनी का सारा का सारा काम अत्य त सहज भाव से सचालित हो रहा था–यदि कोई गौरव का अनुभव भी करता ता समूची कालोनी के प्रति। इस प्रकार श्रेयता को सामूहिकता मे वितरित करन का महानतम काम माकारेंको न किया था। उसमे समुदाय के सभी सदस्य अपनी क्षमता और सफलता पर सामूहिक रूप से गौरव और आत्मविश्वास का अनुभव प्राप्त करते है। इस सबका श्रेय भी माकारेंको को दिया जाना चाहिए और इसके लिए भी कि उसने बच्चा मे देश भक्ति और राष्ट्रीय कर्तव्य की भावना उत्पन्न की।'

माकारेंको की अपने क्षितिज को पार करके देख सकने की पारदर्शिता की ओर इगित करत हुए वी कुमारिन ने रूस की वर्तमान पीढी की ओर स आभार व्यक्त करते हुए कहा– 'जिस भविष्य की ओर माकारेंको न दृष्टि डाली, जिसके लिए वह जिया और जिसका निर्माण किया था, और वे नर नारी जो आज उस स्वप्नदृष्टा के उस भविष्य को जी रह है–उसके उदात्त दृष्टिकोण और उसकी श्रमसाध्य उपलब्धिया क प्रति आभारपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करत है।

उस व्यक्तित्व की व्यापकता को दर्शाते हुए उसके सहयोगी अध्यापक सेम्यान कालाबालिन न ठीक ही कहा है–'केवल अब जबकि माकारेंको हमारे बीच म नही है इस तथ्य को गहराई स समझ पा रहा हूँ कि इस (माकारेंको) गुरु, गमजोश और साहसी आदमी ने क्या कुछ दिया–जीवन के प्रति कितना विशाल और व्यापक दृष्टिकोण था उसका।

माकारेंको बहुत बडे शिक्षा शास्त्री नहीं थ, बहुत बडे शिक्षक थे, शिक्षा अनुभव क बहुत बडे साहित्यकार थे, सफल प्रयोगकर्ता थ–विशेषत अनाथो और किशोर अपराधियो के मसीहा थे और सबस बढकर वे समाजवादी आदर्शो क तेजस्वी प्रतीक थे। समस्त मानवता चिरकाल तक उन्हे याद करती रहेगी, उन पर गौरव करती रहेगी। उनके ये शब्द हमेशा सोवियत वातावरण म गूजत रहेगे– मेरे प्रत्यक विद्यार्थी को बहादुर, दृढ, ईमानदार और परिश्रमी देशभक्त बनना है। सबको आनन्द और खुशियो का जीवन जीना है, सबका सुख दुख बाटना ह।'

भारत के लिए माकारेंको की प्रासंगिकता पर विचार किया जा सकता हमारे यहां लाखों अनाथ और किशोर अपराधी बालक बालिकाएँ हैं जो समुचित शिक्षा के अभाव में दर दर की ठोकर खाते हुए भटक रहे हैं। हमने भी समाजवादी समाज रचना का लक्ष्य अपने सामने रखा है। हमारे युवक-युवतियों को भी बेरोजगारी की विभीषिका का सामना करना पड़ रहा है। समाज में रू धारणाओं की जकड़न है। राष्ट्र आर्थिक विषमता की आग में जल रहा है। शिक्षा के अनेक आयामों और हमारे शिक्षाशास्त्रियों एवं नेताओं के शिक्षा सम्बन्धी विचार भी हमारे सामने हैं, किन्तु वांछित परिणाम अब भी कोसों दूर हैं। निर क्षरता मुंह बाए खड़ी है। धनी शिक्षण संस्थाएँ उच्च वर्ग की सेवा में रत रहते हुए अनुदान के रूप में विशाल आर्थिक साधनों का उपयोग कर रही हैं। क्या इन जैसी अनेक समस्याओं के सामने रहते हुए हमारे लिए माकारेंको की धारणाओं और उनके प्रयोगों की सार्थकता नहीं है?

महात्मा गांधी जब कहते हैं- सभी प्रकार का प्रशिक्षण विशेष रूप से किसी उत्पादक उद्योग के माध्यम से और उससे सहसंबंध(correlation)स्थापित करके दिया जाना चाहिए। तो क्या माकारेंको का मत इस धारणा के मूल के साथ अनुरूप नहीं बैठता? और जब रवीन्द्रनाथ टैगोर का विचार था कि शिक्षा को सजीव और गतिशील बनाने के लिए उसका आधार व्यापक होना चाहिए और सामुदायिक जीवन से उसका स्पष्ट संबंध होना चाहिए। तो क्या माकारेंको की चेतनाओं इससे संबंधित करके नहीं देखा जा सकता? जब कोठारी कमीशन कार्यानुभव और शिक्षा को उत्पादक श्रम से संयुक्त करने की सिफारिश करता है तो क्या माकारेंको के प्रयोगों की सफलता की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होना प्रासंगिकता से परे होगा? यही बात अनाथ, बालकों किशोर अपराधियों और उपर्युक्त अनेक समस्याओं के संदर्भ में भी कही जा सकती है। पूंजीवादी शिक्षाशास्त्रियों की वातानुकूलित कमरों में बैठकर दी गई हताशायुक्त अराजकता की ओर उन्मुख और प्रतिगामी व्यक्तिवाद की पोषक शब्दजाली कलाबाजियाँ 'शिक्षा विचार' के नाम पर गुमराह ता कर सकती हैं-हम सही मार्ग की ओर बढ़ने में कतई सहायक नहीं हो सकतीं। निश्चय ही माकारेंको हमारे लिए प्रासंगिक है।

शिक्षक होने का मतलब

[जोनाथन कोजोल की एक किताब]

एक ओर 'खुशियों का स्कूल' है जिसमें 'शिक्षा आत्मिक जीवन का एक अंश' है। शिक्षक सुखोम्लीन्स्की छात्रों से और उनके माँ बाप से अलग-अलग बातचीत करता है। हृदय की गहराइयों तक पहुँचता है। यहाँ शिक्षा है, उसका लक्ष्य है, उसमें प्रेरणा है, उत्प्रेरणा है, उसमें आस्था है और सबसे बढ़कर छात्रों और शिक्षक की पारस्परिक सक्रियता है। यहाँ न निराशा है और न कोई हताशा। यहाँ न कोई घुटन है और न कोई स्वच्छंद अराजकता। यहाँ न कोई अमीरी है, न कोई गरीबी यहाँ शिक्षा व्यवसाय नहीं—वह एक जीवनी शक्ति है। वह चेतना का विकास है, भावना का उदात्तीकरण है और विश्व दृष्टिकोण के निर्मित होने की चेतना का भव्य भवन। इसको बनाया है उशीन्स्की, विगोत्स्की, माकारेंको, क्रुप्स्काया सुखोम्लीन्स्की, नीना तनिजिना शात्स्की शात्स्काया, पत्रास्की नदोम या श्चाया, द्रागुनोवा और उलसोन आदि ने। यह समाजवादी समाज की शिक्षा है—विकासी मुख, आभा लिए, आशा और आस्था लिए।

दूसरी ओर स्कूल का वातावरण शिक्षा के प्रतिकूल है। घुटन पैदा करता है। छात्र परतंत्र है क्योंकि उसके सामने एक ऐसी समाज व्यवस्था है जो सब मोर्चों पर हारती जा रही है। शिक्षा कुत्सित व्यवसाय हो चुकी है। अच्छी किताब पर प्रतिबंध है। स्कूल नकारात्मकता के घोंसले बन चुके हैं। शिक्षक निष्प्राण और झूठा लेक्चर देता है और छात्र अंधभक्त होकर मुँह बाए सुनने को विवश हो रहे हैं। यहाँ निराशा है, हताशा है, घुटन है। स्वतंत्र चिंतन एवं सत्य अभिव्यक्ति को उत्प्रेरित करने वाला सक्रिय शिक्षक नहीं है। ऐसी स्थितियों ने परेशान किया है—एबी हॉफमन को, एलरिज क्लीवर को, टिमोथी लीयरी को, जेरी रूबिन को और सबसे बढ़कर 'ऑन बीइंग ए टीचर'* के विप्लवी लेखक जोनाथन कोजोल को। यह पूँजीवादी समाज व्यवस्था की शिक्षा है—ह्रासी मुख हताभा लिए, हताशा लिए और हतास्था लिए।

---

*'On Being a Teacher' by Jonathan Kozol, (1981), The Continumm Publishing Co., New York, Pages-177

शिक्षा की दोनों सरचनाओं का अ तर स्पष्टतया दो समाज व्यवस्था का वस्तुगत अ तर है ।

प्रतिगामी समाज व्यवस्था म उसका विरोध करने वाली विकासशील चेतना भी उभरती है । उसका स्वर विद्रोही होता है । वह शोषण की व्यवस्था के लिए चुनौती बनकर सामने आता है । शिक्षक और अभिभावकों को शासन प्रवत्त समाज की शिक्षा व्यवस्था को जड से उखाडने के लिए उत्तेजित करता है । वह सत्याग्रह करने की प्रेरणा देता है । इस प्रकार के वास्तविक परिवर्तनकारियों म से एक सशक्त उदाहरण जोनाथन कोजोल का है ।

सन् 1968 म कोजोल की पहली रचना 'डथ एट एन अर्ली एज' ('शिविरा', मित 74, पृ 119) कृति को बहुत आपत्तिजनक करार दिया गया जो अनेक शिक्षाविचारकों के लिए उतनी ही सम्माननीय सिद्ध हुई जितनी धार्मिकों के लिए धर्म पुस्तक । कोजोल का वास्तविक द्व द्व क्या है इस समझना अत्यन्त आवश्यक है । कोजोल सामाजिक परिवर्तन म विश्वास करता है, यथास्थितिवाद का कट्टर विरोधी है । जडता से उस सख्त नफरत है । शोषण से उस सख्त नफरत है । अधिकारवाद से उस सख्त नफरत है । अन्याय के सामने चुप रहना उस सह्य नहीं है । अन्याय के खिलाफ हर कदम पर आवाज उठनी चाहिए । ऐसी आवाज तभी उठायी जा सकती है जब उसके लिए क्षमता पैदा करने की शिक्षा दी जाए । केवल कक्षा के कक्ष म कबूतर की गुटरगू ही न सुनाई देती रहे । बच्चे का सही मार्गदर्शन करने से पहले उसको सब तरह स पहचानना होगा । उसी कोजोल के अनुसार– शिक्षक का व्यक्ति की उसके सही रूप म पहचान करनी चाहिए उस उसकी कमजोरियां और विशेषताओं, उसकी सारी छोटी बडी आवश्यकताओं और उसकी सारी आध्यात्मिक जरूरतों को अच्छी तरह जानना चाहिए । उस व्यक्ति का परिवार समाज जनजनता मानवता और उसकी अपनी एकान्त चेतना के परिप्रेक्ष्य म जानना चाहिए तभी, केवल तभी वह इस स्थिति म आ सकता है कि उसे सही शिक्षा की सार्थक मार्ग-निर्देशन कर सके ।'

'आन बीइंग ए टीचर' को विख्यात समीक्षक जेम्स मोर्टेट ने 'कक्षा म छात्रों पर प्रतिगामी मूल्यों के थोप जाने के विरुद्ध अध्यापकों और अभिभावकों को सघर्ष की प्रेरणा देने वाला दस्तावेज कहा है । उसके अनुसार इस पुस्तक म कोजोल ने उन क्रियाविधियों की ओर सकेत किया है जिनको अपनाकर शिक्षक अपने छात्रों के मस्तिष्कों को उपस्थित विषम समस्याओं अथवा परिस्थितियों पर स्वत त्र रूप

का शोषण अनवरत गति से बढ़ रहा है, और शिक्षा धनी वर्ग और सत्ताधारियों के हितों का संरक्षण और संवर्द्धन करने का साधन बनी हुई है। शोषक वर्ग का दार्शनिक वाक्य ही रहा है कि संसार इसी तरह चलता आया है और इसी तरह चलता रहेगा—इसमें कोई खास परिवर्तन नहीं किया जा सकता। शिक्षक सत्य को छिपाने के लिए मजबूर होता है, बल्कि उल्टी बात बतलाता है। 'शिक्षा पर' लिखते हुए अनतोलो लूनाचार्स्की ने इसी बात को अपने शब्दों में व्यक्त करते हुए कहा है—

"शोषक सत्ता वर्ग की मांग होती है कि जो सामान्य स्कूलों में आते हैं उन्हें आत्मसमर्पण की शिक्षा दी जाए। ऐसी शिक्षा हो जो समाज की बुराइयों की आलोचना से परे हो और बच्चे को यह बताए कि वह एक ऐसा प्राणी है जिसकी अपनी कोई इच्छा शेष नहीं है।" कोजोल की मान्यता है कि इस दकियानूसी सिद्धांत को उखाड़ फेंकने की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यकता है न केवल बहस करने की बल्कि परिवर्तन को मूर्त रूप देने की भी उतनी ही बड़ी जरूरत है। कोजोल अपने उद्देश्य को इन शब्दों में प्रकट करते हैं—

"हम लिखते हैं, विरोध करते हैं, संघर्ष करते हैं और जब कभी हम उत्प्रेरित किया जाता है, विवश किया जाता है या हमारी आन्तरिक शक्ति की अनुभूति होती है, उसका दबाव होता है कि कुछ किया जाए—तो हम परिवर्तन कर गुजरते हैं। बहुत से अध्यापक यही महसूस करते हैं, जिस तरह विषय में मैं महसूस करता हूं और वे अपने कार्यों का सौदा किसी के भी साथ करने को तैयार नहीं होंगे।

कोजोल के अनुसार परिवर्तनकारी विद्रोही वे होंगे जो आदतन कठोर परिश्रम करने वाले, स्वयं प्रेरित नैतिकता से प्रतिबद्ध और प्रभावशाली विप्लवी हों, जो कार्यकौशल और साथ ही वाग्विदग्धता में किसी से भी कम न पड़ें।

लेखक जानाथन कोजोल का कहना है कि किसी एक ही विचारणीय बिंदु पर शिक्षक और शिष्य में मतभेद हो सकते हैं। मतभिन्नता राजनीतिक मसलों और नैतिक पहलुओं पर हो सकती है किन्तु ऐसा होते हुए भी दोनों में पारस्परिक सम्मान की भावना भी सुरक्षित रह सकती है। अध्यापक का दायित्व होना चाहिए कि वह छात्र को खुल कर मतभेद प्रकट करने की छूट दे। मार्क्सवादियों के अनुसार शिक्षक को छात्र के साथ मिल-जुल कर काम करना चाहिए। उसे सक्रिय सहयोग देना चाहिए।

महिला वर्ग के प्रति पीढ़ियों से किए जाते रहे तिरस्कारपूर्ण व्यवहार पर लेखक ने क्षोभ व्यक्त करते हुए महिलाओं की एतिहासिक भागीदारी को रेखांकित किया है। किस प्रकार कथालिक मजदूर आन्दोलन की सहसंस्थापिका डोरोथी डे और उसके सहयोगियों ने नागरिक अधिकार आन्दोलन के समर्थन और वियतनाम युद्ध तथा आणविक हथियारों की दौड़ के विरोध में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी और आज भी उनमें किस किस प्रकार के एतिहासिक उत्तरदायित्वों के निभाने की अपेक्षा की जा सकती है।

'बच्चों का असत्य बात कहना बुराई है' जैसे उपशीर्षक के अन्तर्गत लेखक बहुत सी मानसिक दासताओं, राजभक्ति की शपथ जैसे मिथ्याचारों और आडम्बरों पर पड़े हुए पर्दों को दूर फेंक देता है। पुस्तक की मूल अन्तर्वस्तु है—बच्चों के मस्तिष्क पर प्रतिगामी सिद्धान्तों की स्थापना के खिलाफ संघर्ष का संचालन और वस्तुगत यथार्थ पर आधारित स्वतन्त्र चिंतनशक्ति को विकसित करना। कोज़ाल का समर्थन करते हुए ही मानो शाड्स्की ने कहा है—' हमें आवश्यकता है और यह आवश्यकता दीर्घकाल तक रहेगी कि हमारे अन्दर टालस्टाय की सी आलोचनाशक्ति हो ताकि हम शिक्षक आम जनता के सामने पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत चलने वाली शिक्षा के सारे छद्म रूप और कपटाचार का भण्डाफोड़ कर सकें।

'आन बीइंग ए टीचर' का रचनाकार एक ओर जहां शिक्षक और शिष्य के सम्बन्धों को अधिकाधिक व्यापक क्षेत्र प्रदान करता है वहां दूसरी ओर स्कूल के विभिन्न पहलुओं पर गम्भीर निर्णय लेने हेतु और साथ ही रचनात्मक स्वरूप देने हेतु सुसंगठित प्रयास का आह्वान करता है। उसे इस बात की कतई परवाह नहीं है कि सत्तापक्ष उसके इस आह्वान से कितना बौखला उठेगा। उसे इस बात की भी कतई परवाह नहीं कि तथाकथित 'शुद्ध' शिक्षाशास्त्री कोज़ाल की इस प्रेरणादायी कृति को विश्लेषण की निरपेक्षता से दूर करार दे देंगे। उसे यह भी परवाह नहीं है कि कोई कहां तक मनोवैज्ञानिक सीमाओं के उल्लंघन का आरोप लगा देगा। उसका उद्देश्य यथातथ्य वर्णन करना मात्र नहीं है। उसका उद्देश्य इस पुस्तक के माध्यम से शिक्षा में परिवर्तनकारी तत्वों अर्थात् अध्यापक और अभिभावक को उस बदलाव के लिए तैयार करना है जिससे छात्र दासता से उन्मुक्त होकर समस्याओं पर स्वतन्त्र रचनात्मक धार और उस पर एक दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ सकें।

क्या भारत के लिए कोज़ाल की प्रासंगिकता है?

अप्रेल 1983

हमारी शिक्षा का एक उपेक्षित बिन्दु

शिक्षा को गाली देने का आम रिवाज है। विशेषकर स लेकर तथा तक उसे रग अलग अन्दाज म कोसते रहते हैं।

"—आज शिक्षा की हालत बहुत खराब है। उसमे क्रांतिकारी परिवतन ये जाए।"—अधिकाश प्रतिक्रियावादियो का भी कहना है।

अराजकतावादी कहते हैं—स्कूल मर गया हम स्कूल नही चाहिए।—कुछ नौपचारिक या ऐसा ही कुछ और मसाला लाओ। और ऐसा कहने वाले बड़े री प्रवलम द कहलाते है—खूब छपते हैं असमाजवादी देशो की पत्रिकाओ म। शिक्षा के विरुद्ध एक भयकर षड्यन्त्र अपने शोषक मालिको का मगन करने लिए।

ध्यान रहे यह तटस्थ अथवा निरपक्ष चिन्तन नही है—है उलझे पुलझे शब्दो जाल म लुकाई हुई पक्षपात भरी जहरीली पुडिया।

शिक्षा, शिक्षा है—अपने समग्र रूप म एक सजीव सामाजिक व्यक्तित्व। से औपचारिक—अनौपचारिक रूपो म खण्डित करके देखने वाले कौने हैं—वहगे। प्रत्येक समाज की विकास प्रक्रिया के अनुसार उसकी गति होती है।

विश्व के प्रत्येक कोने म किडरगाटन से लेकर विश्वविद्यालय तक जो भी सस्थाए हैं—वे जीवित—शिक्षा है। हम सब इन्ही म से गुजरे है। औपचारिक शिक्षा के महत्व को न समझने वाला को हम क्या कहें।

इसका अथ यह नही कि शिक्षा (औपचारिक-अनौपचारिक-या और कुछ!) में सब कुछ ठीक है। नहा, विकास के प्रवाह म कमिया भी होती है, जिन्हे सही रूप स आकने वाले ही दूर कर सकते हैं तथाकथित बुद्धिजीवियो की जटिल वाग्विलासता नही।

भारतीय शिक्षा के अनेक पहलुओ का विश्लेपण हुआ है-मूल्याकन भी किया गया है, कि तु एक ऐसा नुक्ता है जो उपेक्षित रहा है और इस लिए ऊल-जलूल शक्षिक रचनाओ, प्रवचनो और प्रसारणो मे की जाने वाली चिल्लपा असह्य सी लगन लगती है।

साफ, सीधी बात है कि भारत ने शिक्षा के क्षेत्र म एक ऐसा अनुपम प्रयोग किया है जिसका मुकाबला रगभेद की नीति पर चलने वाले साम्राज्यवादी शोषक-देशो, अनेक गुटनिरपेक्ष देशो और यहा तक कि अविकसित समाजवादी देशो की जनशिक्षा व्यवस्थाए भी नही कर सकी। खेद यही है कि न तो हमारे इस प्रयोग को समझा ही गया है और न इसका तुलनात्मक अध्ययन किया जाकर इसका दय इसे दिया गया है।

यहा बात जनशिक्षण की है आम आदमी के जहन को लगाने की। प्रौढ शिक्षा के आकडे एकबारगी दूर फेंक दें। प्रौढ शिक्षा का सूत्र भी विदेशी दलालो, अराजकतावादियो और साम्प्रदायिक निशाचरो के हाथ म पहुचा हुआ है—उस ये साजिशें प्रभावित नही कर सकी हैं।

एक दष्टि अ ग्रेजी शासन की भारतीय जन चेतना की तरफ लौटाइये और उस पर एकाग्र होकर सोचिए। निर्वाचन, लोकत त्र, धर्म-निरपक्षता, पचवर्षीय योजना औद्योगीकरण राष्टीयकरण, समाजवाद, कृषि का आधुनिकीकरण, पचायतराज और पचशील आदि शब्दो का अथ भारतीय जनता (गरीब मजदूर, किसान, निम्न मध्यम वग अर्थात् आम आदमी) के लिए कुछ भी नही था। वोट के जरिये सत्ता उलटने-पलटन की उसकी अपनी शक्ति का उसे अहसास ही नही था। इस विषय म विस्तार से पाठक सोचेगा क्योकि इन पक्तियो का उद्देश्य शिक्षा के मूल्याकन स अपेक्षित बि दु की ओर ध्यान भर आकृष्ट करना है।

हा, तो स्वत त्रता सनानियो म एक था जवाहरलाल नहरू-जिसन 'पिता के पत्र पुत्री के नाम', 'विश्व इतिहास की झलक' और 'हि दुस्तान की खोज' जसी पुस्तको की रचना की—एक निहायत प्रगतिशील चितक, अध्यापकरूपा पिता या नेता अथवा भारत के आम आदमी के प्रियतम व्यक्ति के रूप म। उस समय के किस नता न विश्व इतिहास पर इस तरह शिक्षकीय अ दाज म कलम उठान की हिम्मत की थी—इस तरह हि दुस्तान की खोज' और किसन की थी?

हमारी शिक्षा का एक उपेक्षित बिन्दु

शिक्षा को गाली देने का आम रिवाज है। निरक्षर से लेकर नेता तक उसे नग अलग अन्दाज मे कोसते रहते हैं।

"—आज शिक्षा की हालत बहुत खराब है। उसमे क्रांतिकारी परिवर्तन ये जाए।"—अधिकांश प्रतिक्रांतिकारियो का भी कहना है।

अराजकतावादी कहते हैं—स्कूल मर गया हमे स्कूल नही चाहिए।—कुछ नौपचारिक या ऐसा ही कुछ और मसाला लाओ। और ऐसा कहने वाले बड़े ारी अक्लमंद कहलाते है—खूब छपते हैं असमाजवादी देशो की पत्रिकाओ म। क्षा के विरुद्ध एक भयंकर षड्यंत्र अपने शोषक मालिको का मंगल करने लिए।

ध्यान रहे यह तटस्थ अथवा निरपेक्ष चिंतन नही है—है उलझ पुलझे शब्दो जाल म छुपाई हुई पक्षपात भरी जहरीली पुडिया।

शिक्षा, शिक्षा है—अपने समग्र रूप मे एक सजीव सामाजिक व्यक्तित्व। मे औपचारिक-अनौपचारिक रूपो मे खण्डित करके देखने वाले बौने हैं—वह्गे। प्रत्येक समाज की विकास प्रक्रिया के अनुसार उसकी गति होती है।

विश्व के प्रत्येक कोने मे किंडरगार्टन से लेकर विश्वविद्यालय तक जो भी स्थाए हैं—व जीवित—जिन्दा हैं। हम सब इन्ही म से गुजरे हैं। औपचारिक शिक्षा के महत्व को न समझने वालो को हम क्या कहे!

इसका अर्थ यह नही कि शिक्षा (औपचारिक-अनौपचारिक—या और कुछ!) । सब कुछ ठीक है। नही विकास के प्रवाह म कमियां भी होती है, जिन्हे सही रूप से आंकने वाले ही दूर कर सकते हैं तथाकथित बुद्धिजीवियो की जटिल वाग वलासता नही।

/ /

भारतीय शिक्षा के अनेक पहलुओ का विश्लेषण हुआ है-मूल्यांकन भी किया गया है, किं तु एक ऐसा नुक्ता है जो उपेक्षित रहा है और इस लिए ऊल जलूल शक्षिक रचनाओ प्रवचनो और प्रसारणो मे की जाने वाली चिल्लपो असह्य सी लगन लगती है।

साफ, सीधी बात है कि भारत ने शिक्षा के क्षेत्र मे एक ऐसा अनुपम प्रयोग किया है जिसका मुकाबला रगभेद की नीति पर चलने वाले साम्राज्यवादी शोषक-देशो, अनेक गुटनिरपेक्ष देशो और यहा तक कि अविकसित समाजवादी देशो की जनशिक्षा व्यवस्थाए भी नही कर सकी। खेद यही है कि न तो हमारे इस प्रयोग को समझा ही गया है और न इसका तुलनात्मक अध्ययन किया जाकर इसका देय दम दिया गया है।

यहा बात जनशिक्षण की है आम आदमी के जहन को लगाने की। प्रौढ शिक्षा के आकडे एकबारगी दूर फेंक दें। प्रौढ शिक्षा का सूत्र भी विदेशी दलालो, अराजकतावादियो और साम्प्रदायिक निशाचरो के हाथ म पहुचा हुआ है—उसे ये साजिशें प्रभावित नही कर सकी है।

एक दृष्टि अ ग्रेजी शासन की भारतीय जन चेतना की तरफ लौटाइये और उस पर एकाग्र होकर सोचिए। निर्वाचन, लोकत त्र, धम-निरपक्षता, पचवर्षीय योजना औद्योगीकरण राष्ट्रीयकरण, समाजवाद कृषि का आधुनिकीकरण, पचायतराज और पचशील आदि शब्दो का अथ भारतीय जनता (गरीब मजदूर, किसान, निम्न मध्यम वग अर्थात् आम आदमी) के लिए कुछ भी नही था। वोट क जरिय सत्ता उलटने-पलटन की उसकी अपनी शक्ति का उसे अहसास ही नही था। इस विषय म विस्तार से पाठक सोचेगा क्याकि इन पक्तियो का उद्देश्य शिक्षा क मूल्याकन से अपेक्षित बि दु की ओर ध्यान भर आकृष्ट करना है।

हा तो स्वत त्रता सेनानियो म एक था जवाहरलाल नेहरू-जिसन 'पिता क पत्र पुत्री के नाम, 'विश्व इतिहास की झलक' और हि दुस्तान की खोज' जसी पुस्तको की रचना की—एक निहायत प्रगतिशील चिंतक, अध्यापकरूपी पिता या नेता अथवा भारत के आम आदमी के प्रियतम व्यक्ति के रूप मे। उस समय के किस नेता न विश्व इतिहास पर इस तरह शिक्षकीय अ दाज म कलम उठाने की हिम्मत की थी—इस तरह हि दुस्तान की खोज' और चिंतन की थी?

उसने अपनी रचनाओं से जनता को शिक्षित किया, उसने अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले मार्मिक भाषणों से शिक्षित किया, उसने राष्ट्र के आंतरिक चिंतन द्वन्द्व को दिशा दी तो दूसरों से भी टकराया—विरोधियों से उसका भीतर और बाहर टकराना शिक्षण कार्य प्रमाणित हुआ। उसने गांधी के जीवन में गांधी चिंतन को चुनौती दी और इस देश में एक नई पीढ़ी पैदा की।

आजादी आई और नेहरू प्रधानमंत्री बना। जन शिक्षण का मूल शायद यहीं से शुरू होता है। नेहरू ने लोकतंत्र को भारतीय जनजीवन का अंग बना दिया। संसदविधानसभा पंचायत आदि के चुनाव। पहला चुनाव दूसरा चुनाव, तीसरा चौथा पांचवां चुनाव और फिर अनेक उपचुनाव। चुनावों की क्रियाओं की अनवरतता ने आम जनता को तानाशाहियों के नीचे कराहती जन चेतनाओं से भिन्न स्तर पर—उन्नत स्तर पर ला खड़ा किया। इसी का परिणाम था कि कांग्रेस जीती हारी फिर जीती और कई राज्यों में कई बार कांग्रेसेतर दलों की सरकारें अस्तित्व में आईं।

एक बहुत बड़ी जन शिक्षा विकसित हुई इस पिछड़े हुए देश में, जिसकी ओर शिक्षाशास्त्रियों ने समुचित दृष्टिपात नहीं किया।

देश का औद्योगीकरण हुआ, अनुसंधान शालाएं खुलीं, तकनीक का विकास हुआ नेहरू ने विशाल प्रतिष्ठानों को, बांधों को 'आधुनिक मंदिर' कह कर समझाया। देश में मजदूर वर्ग बढ़ा—नया तकनीकी ज्ञान आया जिसके फलस्वरूप अणुशक्ति और उपग्रह विज्ञान यहां की चेतना का एक अंग बन गया। औद्योगीकरण की विशालता आम आदमी के दिमाग में उतरकर उसे धर्मान्धता से दूर हटाती है। क्या दूसरे देशों के कट्टरपंथी रुझान को भारतीय जनता ने सदियों पीछे नहीं छोड़ दिया?

औद्योगीकरण में निजी क्षेत्र के साथ सार्वजनिक क्षेत्र का विकास किया गया और भारतीय जनता को 'राष्ट्रीयकरण' शब्द का परिचय प्राप्त हुआ—बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद तो यह शब्द मध्यवर्ग और किसानों के जीवन के साथ घुल मिल गया। जिस शब्द का तीस साल पहले गांव में प्रवेश तक नहीं था—वह अब सार्थक बन कर सुपरिचित हो गया। दूसरी ओर निजी उद्योगों की बेतहाशा मुनाफाखोरी और साम्राज्यवादी बहुराष्ट्र कम्पनियों की डकैती भी साफ साफ नजर आने लगी।

पचवर्षीय योजनाओ का प्रचलन करके नेहरू योजनाबद्ध विकास के माध्यम से जनकल्याण की साकारता को सामने ला सके। ये योजनाएँ किसी न किसी रूप मे कुछ न कुछ परिमाण म ग्राम्य अचला तक पहुच गई-और इनके माध्यम से व्यापक जनशिक्षण की स्थिति पदा हो गई।

जातिवादियो, और फासिस्ट प्रवृत्तिया का सहारा लेकर विदेशी शोषक शक्तिया न दगे भडकाने, राजनतिक हत्याए करवाने, पृथक्ता के द्वारा देश के टुकड टुकडे करने, अराजकता फलाने वाला का हथियार बना कर भारत को बरबाद करने की हरच द कोशिश की-कि तु नेहरू के धर्मनिरपेक्ष दष्टिकोण अपनाने के प्रभावशाली शिक्षण का ही यह परिणाम हुआ कि देश म साम्प्रदायिक एव विघटनकारी तत्व नही पनप सके।

नेहरू ने अपनी किताबो, अपने भाषणो और अपन व्यावहारिक जीवन के द्वारा लोकत त्र की नीव डाली, उसकी रक्षा की और उसे विकसित किया। नेहरू ही वह व्यक्ति था जिसने 'चाणक्य" नाम से 'जवाहरलाल नेहरू लेख लिखकर अपने ही व्यक्तित्व की आत्मालोचना करके देश की जनता को छिपी हुई तानाशाही प्रवत्तिया स जूझन के लिए उत्प्रेरित किया था।

'समाजवाद का अथ अनेक समाजवादी भावुकतापूर्ण शब्दावली म कर बठते हैं जो पढन सुनन वालो म अनेक भ्रम पदा करता है-यथा 'भारतीय जनता के सामन इन सबका पर्दाफाश करते हुए वज्ञानिक समाजवाद की सही रूपरेखा प्रस्तुत की। इस सम्ब ध म प्राय उनके सुप्रसिद्ध उद्धरण को उद्धत किया जाता रहा है-अत यहां उसकी पुनरावति की आवश्यकता नही प्रतीत होती।

शिक्षक सवाद पद्धति से ही शिक्षा दे सकता है—जैसे प्राचीनतम काल स लकर अब तक के भारतीय साहित्य म परिलक्षित है। शिष्य पूछता है-गुरु जवाब देता है तथा गुरु सम्बोधित करता है-प्रश्नोत्तर करता है। नेहरू की भी वही पद्धति रही। पिता क पत्र पुत्री के नाम' और 'विश्व इतिहास की झलक' म नेहरू 13–14 साल की अपनी बेटी प्रियदर्शिनी इ दिरा को ता पत्रा क माध्यम स पढ़ाना ही है, अपितु भारत की, और सन् 1917 की महान अक्टूबर क्राति क बाद की तत्कालीन किशोर पीढ़ियो और भविष्य म आने वाली युगयुगातर तक की पीढ़िया को पढ़ाता जा रहा है। इस जोड की, इस स्तर की अय शक्षिक रचना अब तक देखने को नहीं मिली।

भारत एक पाठशाला है-प्राचीन पाठशाला-एक ऐसी प्राचीन पाठशाला, जिसम अनेक सस्कृतियो की मिश्रित परम्पराओं को धारण किए हुए भारतीय लोग उसम आवासित विद्यार्थी है-नेहरू एक शिक्षक है। विश्व इतिहास की झलक' और हिदुस्तान की खोज' जसी समाजशास्त्रीय पाठ्यपुस्तकें हैं। पत्राचार की शिक्षा का सिलसिला भी है। आप चाह तो इसे औपचारिक शिक्षा कह सकते हैं। उसके जीवन की घटनाए प्रयोगशाला के प्रयोग और ससदीय और उसम स्तर उसकी विविधा अभिव्यक्तिया उसकी शिक्षा का अनौपचारिक स्वरूप। वह इतिहास, भूगोल, दशन, राजनीति विज्ञान और साहित्य पढा रहा है। वह थकता नही, पढाता हा जा रहा है और भारतीय जन छात्र उबता ही नही उससे पढ़ता ही जा रहा है। नेहरू का यह शिक्षण व्यक्तित्व जिसे अब तक नहीं परखा गया कभी नही मरेगा।

नेहरू का दृष्टिकोण वज्ञानिक था जो हमारी सूझ को साफ करता था और उस व्यक्ति के भीतर का साहस, उसका गुलाबी सौंदयबोध, उसका दार्शनिक गाभीय, उसकी कलाकार मगिमा, कवि-त मयता और राष्ट्र के लिए समर्पित जजबात अथक कुर्बानी की तमन्ना आदि हमे अपने उस शिक्षक को चाचा' के रूप म प्यार करने, प्यार पान और उसस शिक्षित होने को विवश किया करते थे।

भारत मे गाधी टैगोर जाकिर हुसन, राधाकृष्णन् और अनेक वामपथी तथा प्रगतिशील व्यक्ति शिक्षा से सम्बधित रहे है। उनकी जनशिक्षण म अमूल्य देनें हैं किन्तु महान होते हुए भी कुछ आधुनिकता स काफी पिछड गए और कुछ वस्तुगत परिस्थिति से अधिक आगे दौडने लगे। किसी ने सरलसहज शब्दावली म इतिहास की झलक और पुत्री को पत्र जसी विशुद्ध पाठयपुस्तक टाइप शक्ति रचना नही दी और न ही वसा भावबोध। नहरू न पिछडा और न दौडा-वह चलता रहा बढता रहा।

नहरू की रचनाओ मे शिक्षा सम्ब धी उद्धरण छाटे जाए तो उसका समूचा स्वरूप सामन लाया जा सकता है। सचमुच शिक्षक के रूप म नहरू व्यक्तित्व को उद्घाटित करना एक अनुस धान का विषय होगा। कोठारी कमीशन पर नेहरू की छाया देखी जा सकती है।

हा जवाहरलाल नेहरू एक सफलतम शिक्षक था, जस रूस म क्रातिद्वारा

लनित और वियतनाम मे अक्ल होची मिन्ह । ये अपने देश की जनता के शिक्षक थ-विश्वभर की तत्कालीन और भावी पीढियो के भी शिक्षक ।

मैं दृढतापूर्वक कह रहा हू कि भारत शिक्षित हुआ है-इसीलिए वह कुछ एमी बुनियादें आत्मसात कर सका है जिन पर वह आगे और आगे बढता चला जायगा । उन विकास की आधारभूत शिक्षाओ से पीछे हटाकर उसको उलट रास्त पर मोड देना अब किसी के लिए भी आसान नही है । इस प्रकार इस देश को शिक्षित होने का मूल्याकन नही किया गया, जिस विस्तार के साथ किया जाना चाहिए और एसी शिक्षा पर गौरव प्राप्त किया जाना चाहिए-न कि प्राप्त शिक्षा का उपेक्षा और अधिकाशत नकारात्मकता का कफन ओढाने की शरारत भरी कोशिश करने की छूट दी जानी चाहिए ।

नवम्बर-1981

शिक्षक सगठन : सार और स्वरूप

सन् 1945 ई म दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त हुआ । जीतने और हारने वाले देशो को जन और साधन की भयकर क्षति का सामना करना पडा । और तो और अकले सोवियत सघ म 80,000 स्कूलें नष्ट कर दी गईं । हा, एक नतीजा यह सामने आया कि देश भक्त के जनबल को पराजित नही किया जा सकता । यह नतीजा तज लहर की तरह सारी दुनिया म फैल गया । फासिस्ट शैतान की अनिवार्यता की हार का मानव न अपनी जीत समझकर अपने आपको आत्म-गौरव म भर लिया । साथ ही उसन फिर युद्ध न होने देने के लिए एक और सगठित प्रयास करने का प्रयत्न शुरू किया-सयुक्त राष्ट्र सघ का गठन करके । सन् 1946 म सयुक्त राष्ट्र सघ के मच म एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि [illegible] के पुनगठन और उसके उन्नयन के लिए, लोकतन्त्र की रक्षा और समाज के रचनात्मक विकास व मूल्यो को साकार स्वरूप देने के लिए सभी देशो के शिक्षको को एक जुट होकर आग बढना चाहिए और एक 'शिक्षक धारणा पत्र (Teachers' Charter) ।

प्रकाशित करना चाहिए। यह प्रस्ताव वह आधार था जिस पर सन् 1946 में पेरिस में World Federation of Teachers' Unions (FISE) की स्थापना की गई, जिसके अध्यक्ष हेनरी वाल्लान और महासचिव पॉल डला यो वन।

सन् 1948 ई० में FISE के तत्वावधान में तीन अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षक संगठनों की एक संयुक्त समिति का गठन किया गया, जिसमें World Federation of Teachers' Unions (FISE), International Federation of Secondary Teachers' Organisations (FIPESO) and International Federation of Teachers' Associations (IFTA) विश्व शिक्षक संगठन पहली बार एक ही मंच पर इकट्ठे हुए। FIPESO का जन्म यद्यपि सन् 1912 ई० में ही हो चुका था किन्तु उसकी अपनी सीमाएं थी अतः वह उनसे ऊपर नहीं उठ सका। IFTA ने सन् 1948 में एक Teachers' Charter। अपने लिए स्वीकार किया था जिसे संयुक्त समिति ने अपने लिए विचार विमर्श का आधार बनाना मान लिया। अब FISE ने विभिन्न राष्ट्रीय शिक्षक संगठनों और आपसी अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षक, संगठनों को एक ही मंच पर लाने और IFTA द्वारा प्रस्तुत Teachers' Charter के प्रारूप को सर्वसम्मत व्यापक स्वरूप देने के लिए अपना अभियान आरम्भ किया। FISE के एकता प्रयासों की सफलता की पूरी सम्भावनाएं उभर कर सामने आ गई और अब धनी देशों की राजनीति को विश्वव्यापी पैमाने पर शिक्षकों की चुनौती का होवा आतंकित करने लगा। कहीं शिक्षा के क्षेत्र से शोषण का उन्मूलन करने की आवाज जोर न पकड़ ले-अतः उसे मार्गान्तरित किया जाय। अपने इसी उद्देश्य के लिए सन् 1952 में अपने युद्ध हिमायती शिक्षक संगठनों को मिलाकर एक प्रतिद्वन्द्वी विश्व शिक्षक संगठन-World Confederation of Organisations of the Teaching Profession (WCOTP) की स्थापना की।

FISE की पहल पर दिनांक 21 से 26 जुलाई 1953 को दुनिया भर के शिक्षक संगठनों का एक सम्मेलन वियना में बुलाया गया, जिसमें 50 देशों के 176 प्रतिनिधियों और 86 दर्शक अतिथियों ने भाग लिया। यह अपने आप में पहला विश्व शिक्षक सम्मेलन था। अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षक संगठनों की संयुक्त समिति की 19वीं बैठक 9 से 11 अगस्त, 1954 को मास्को में हुई जिसमें उपर्युक्त सम्मेलन में आए सुझावों पर काफी विचार विमर्श के बाद Teachers' Charter को अंतिम रूप दिया गया। इस पर तीनों अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के अध्यक्षों और

महासचिवों ने हस्ताक्षर किए और दुनिया भर के शिक्षकों के समक्ष पहलीबार उसे प्रचारित किया गया। इस चार्टर में Prelude में कहा गया —

"शिक्षकों का समाज में एक महत्त्वपूर्ण दायित्व है बच्चों को शिक्षित करने का महान् कार्य पूरा करना—केवल व्यक्ति के विकास के लिए ही नहीं, अपितु समाज के विकास के लिए भी। शिक्षण व्यवसाय अपने शिक्षकों को इन दोनों उत्तरदायित्वों को पूरी तरह निभाने के लिए प्रतिबंधित करता है। शिक्षकों को अपने पूरे स्वतन्त्र नागरिक और व्यावसायिक अधिकार प्राप्त करने का सम्पूर्ण अधिकार है। बच्चे के व्यक्तिगत व्यक्तित्व के विकास के लक्ष्य को स्वीकारते हुए शिक्षकों के लिए अपने छात्रों के विचारों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के अधिकार को सम्मानित और उनमें स्वतन्त्र निर्णय लेने की शक्ति के विकास को प्रोत्साहित करना आवश्यक होगा।"

विश्व शिक्षक सम्मेलन में मान्य शिक्षक घोषणा पत्र प्रस्ताव और विश्व के शिक्षकों का आह्वान करने वाली अपील जैसे सर्वसम्मत दस्तावेज प्रसारित किए गए। घोषणा पत्र में शिक्षकों के कर्तव्य और अधिकारों की घोषणा की गई प्रस्तावों में विश्वशांति की रक्षा, शिक्षकों के आर्थिक हित लोकतान्त्रिक अधिकार और राजनैतिक विचारों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति जैसे मुख्य बिन्दु थे और अपील में एकजुट होकर संगठित होने, संघर्षरत रहने और विश्वव्यापी ध्रुव तथा विश्वशांति के लिए अनवरत कार्य करने के लिए आह्वान किया गया था। संयुक्त विज्ञप्ति में जिन्होंने हस्ताक्षर किए वे थे—मवथो आई प्रिवर्सोव, पी डिले पी (FISE), एम एल डूमास, आर माइकेल (IFTA) और मिस एम पी एटम्स और श्री ए डबल्यू एस हविंस (FIPESO)

FISE का मुख्य पत्र 'Teachers of the world' गत 33 वर्षों से नियमित रूप से निकल रहा है जिसमें विश्व शिक्षक महासंघ FISE और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय शिक्षक संगठनों एवं शिक्षा प्रयोगों तथा नवाचारों की गतिविधि का केवल परिचय नहीं होता है, अपितु विश्लेषण और विवेचन भी होता है। FISE आज भी विश्व भर के सभी संगठनों को एकजुट करने की जी तोड़ कोशिश कर रहा है।

विश्व के चार करोड़ से ऊपर की संख्यावाला शिक्षक समुदाय मूलतः दो संगठनों में विभाजित है, समाजवादी और पूंजीवादी समाज पद्धतियों के आधार

पर सगठित क्रमश FISE और WCOTP के रूप मे। WCOTP की स्थापना FISE की स्थापना के छ साल बाद अर्थात सन 1952 म हुई-अत उसे प्रतिद्व द्वी सगठन माना जाना चाहिये, कि तु यह भी सही है कि वह FIPESO और IFTA को सबद्धता देकर उनके परिपक्व अनुभवो को बटोरने म सफल रहा है।

FISE और WCOTP की घोषणाओ, प्रस्तावो और अपीलो का अध्ययन करने पर दोनो की मा यताओ और सक्रियताओ म समानता और अ तर स्पष्टतया समझ म आ जाता है। समानता इन बातो म है कि दोनो को सयुक्त राष्ट्र सघ का समथन और आर्थिक अनुदान प्राप्त ह। दोनो शिक्षको और छात्रो के शोषण और भेदभाव के विरुद्ध आवाज बुल द करत हैं। दोनो शिक्षा म मनोवनानिक वनानिक और तकनीकी नवाचारो पर विचार विमश करके अनुकूल सुझाव दते हैं। WCOTP के विश्व शिक्षक सम्मलन म पारित दससूत्री प्रस्तावो म—शक्षिक उत्तरदायित्व स्कूल परिवार और समुदाय का समाज और शिक्षा क विकास म पारस्परिक सहयोग औपचारिक अनौपचारिक शिक्षा की प्राप्ति, सामुदायिक कार्यो म बच्चो की भागीदारी अध्यापक अभिभावक विचार मच शिक्षा के लिए आर्थिक साधनो का विकास शोषण और भेदभाव मिटानवाल सामाजिक परिवतन के लिए सक्रियता शिक्षा क समान अवसर और सुविधाए, जनसहयोग और शिक्षक सघो को ट्रेड यूनियन अधिकार देन और शिक्षको के दमन के विरुद्ध सघष आदि मुख्य है। इनम और FISE के प्रस्तावो म लगभग समा नता है। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि बावजूद अ तर के दोनो सगठनो के नेता एक दूसरे मच पर शामिल होकर अपने अपने विचार खुले रूप स प्रकट करत हैं। FISE के बारहवें सम्मेलन म WCOTP के महासचिव जान एम थाम्पसन ने जहा दोनो सगठनो की वचारिक समानता के बिन्दुओ पर आधारित एकता पर बल देते हुए कहा– वे विश्वजनीन विषय जिन पर हम एकसा विचार रखते हैं उनके लिए हम अपने वचारिक मतभेद दर किनार रखकर अपन आपको एकता बद्ध प्रयास करने हेतु सबोधित करना चाहिए, WCOTP हर प्रकार के धार्मिक और राजनतिक विचार टेड यूनियन सगठन और विभि न शिक्षा पद्धतियो क कायकर्ताओ के एक ही सगठन मे होन की धारणा के प्रति समर्पित है। और इसी सम्मेलन म थाम्पसन न FISE और WCOTP के बीच मतभेदो की ओर भी सकेत किया —

WCOPT का हम सदस्य FISE म इस बात म तो सहमत है कि श्रम

रिका ने वियतनाम म दखल देकर बुरा किया, लेकिन उसके द्वारा सोवियत सघ के अफगानिस्तान मे दखल देने पर चुप्पी साध लेने का हम समथन नही कर सकते। हम समाजवादी पौलैंड द्वारा वहा की ट्रेड यूनियन के हडताल के अधिकार पर चोट करने को कस सह सकते हैं ? इधर FISE के सदस्यो का यह मानना कि साम्राज्यवादी पडयत्रो को एक ही धरातल पर और कम करके कसे आका जा सकता है ?

इस प्रकार के कुछ नीति सबधी बुनियादी मतभेदो के रहते हुए दो सगठनो का एक बन जाना तब तक सभव नही होगा जब तक कि विश्व दुश्मनी पूर्ण दो वर्गो-शोषक और शोषित की स्थिति से मुक्त नही हो जाता।

यह है आज के अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षक सगठन पर एक विहगम दृष्टि, अब दखें इन दोनो मूल महासघो से (जिनसे दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय सगठन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुडे हुए है) सबद्ध राष्ट्रीय शिक्षक सगठनो पर उडती नजर डालें-क्योकि पूरा विश्लेषण तो यहा सभव नही हो सकता। इसके लिये आवश्यकता है 'शिक्षक सघो के इतिहास' को अलग ग्रथ म प्रस्तुत करने की।

FISE के 12वें सम्मेलन म WCOTP के महासचिव ने बताया कि उनके सगठन मे 81 देशो के राष्ट्रीय शिक्षक सगठन सबद्ध है जबकि इसी सम्मेलन म FISE से सबधित 82 देशो के राष्ट्रीय शिक्षक सगठनो के प्रतिनिधियो ने भाग लेने का दावा FISE के द्वारा किया गया गया है। इससे यह नतीजा निकाला जा सकता है कि दोनो विश्व सगठनो की शक्ति लगभग बराबर है। फिर भी यह तो स्पष्ट ही है कि प्रतिनिधियो के सगठन वाम और दक्षिण विचार धाराओ म विभाजित हैं। लगभग सभी समाजवादी देशो के शिक्षक सगठन FISE से जुडे हुए हैं जबकि पूजीवादी देशो का दक्षिण रुझान का सगठन WCOTP से सबद्ध है तो उसी देश का वाम रुझान का सगठन FISE से जुडा हुआ है। उदाहरण के लिए सोवियत सघ का टीचर्स ट्रेड यूनियन FISE म जुडा हुआ है तथा इसके अतिरिक्त वहा कोई दूसरा प्रतिद्वद्वी नही है जो WCOTP से जुड सके। इधर सयुक्त राज्य अमेरिका का एन ई ए WCOTP से सबद्ध है तो उसी देश का ए एफ टी FISE से जुडा हुआ है। भारत का AIFEA सबद्ध है WCOTP से तो भारत का ही AIFUCTO और अखिल भारतीय माध्यमिक सघ FISE से सबद्ध है।

अमरिका में सगठन नेशनल एज्यूकेशनल एसोसिएशन ने शिक्षकों के लिए कोड आफ ईथिक्स फार टीचस (शिक्षकों के लिए आचार सहिता) को निर्धारित किया। इस आचार सहिता म शिक्षकों के उत्तरदायित्व की धाराए दी गई थी। क्योंकि एन इ ए शक्ति और राजनीति की दृष्टि से अधिकारी वग का अधिक प्रश्रय देती है इसलिए अमरिकन फडरेशन आफ टीचस ने "निष्क्रिय विद्वतापूर्ण घोषणाओं के स्थान" पर सक्रिय अध्यापक आन्दोलन का भण्डा ऊपर उठाया। इग्लैंड का नेशनल यूनियन ऑफ टीचस FISE और WCOTP दोनों के सम्मलना म भाग लेता है और एक मात्र शक्तिशाली यूनियन होने का दावा करता है।

विभिन्न देशों म वर्गानुसार कायरत लगभग 250 राष्ट्रीय स्तर के शिक्षक सगठन अन्तराष्ट्रीय सगठनों के मार्गदर्शन म शिक्षकों, शिक्षा, शिक्षा और समाज के विकास के लिए अनवरत प्रयत्नो म सलग्न हो रहे हैं। वे अधिवेशनों समिनारो, श्रमिक और प्रतिनिधि मण्डलो, असहयोग आन्दोलनो, सगठन साहित्यिक रचनाओ विधान मण्डलो की पत्रिकाओ प्रदर्शनो प्रदर्शनियो, सरकारों म भागीदारी आदि विविध प्रणालियो को अपनाकर शक्षिक जगत के इतिहास की रचना कर रहे हैं। वो जमाना बीत गया जब शिक्षक सगठनो की भूमिका की उपेक्षा की जा सकती थी। वियतनाम के हो ची मिन्ह ने आवाज दी कि अगले सात सालो के बाद देश म कोई भी निरक्षर नही रहना चाहिए तो वहाँ के शिक्षक सघ ने शिक्षको की मार्फत तीन साल म निरक्षरता का उन्मूलन कर दिया और सघ के प्रतिनिधि मण्डल ने हो ची मिन्ह से मिलकर कहा— 'अकल हो ! बताओ, कहा है इस देश म अब कोई बचा हुआ निरक्षर !

समाजवादी देशो में शिक्षक सघो के हाथ म समूची शिक्षा की बागडोर ही है। वहा सत्ता गौण है, टीचस ट्रेड यूनियन प्रमुख। यूनियन का नेता बड़े अधिकारी की जाच कर सकता है। शिक्षक यूनियन अभिभावक यूनियन, श्रमिक यूनियन, छात्र यूनियन और किसान यूनियन आदि सब मिलकर वहा की सारी व्यवस्था का सचालन करते हैं। सत्ता तो कवल साधन जुटाने वाली इकाई मात्र है। अत समाजवादी व्यवस्था म न तो कोई प्रतिद्वन्द्वी यूनियन होती है और न यूनियन को व्यवस्था से असहयोग करने की आवश्यता ही महसूस होता है। जब वह स्वय भाग्यविधाता ह तो असहयोग किसस ? जहा जिस किसी समाजवादी देश मे व्यवस्था अपरिपक्व रह गई है और साम्राज्यवादी साजिशो की शिकार हो गई है तो वहा की ट्रेड यूनियन के एकाध लफ्फाज बिकाऊ नेता गड

बढ़ी पदा करके शोषण को वापिस लाने की चेष्टा कर सकते है। ऐसी घिनानी चेष्टाओं को दबाना ही एकमात्र कत्तव्य हो जाता है। शोषक वग के दलाल नेता परिस्थिति का तोड़ फोड़ कर मूल्यांकन करते हुए इसी को समाजवादी देशो म श्रमिकों का दमन, कहते हुए चिल्लाते फिरते हैं। पोलैंड म वालेसा के नेतृत्व म इसी प्रकार की साजिश की गई थी जिसे WCOPT के महासचिव थॉम्पसन तक समझने म असमथ रहे।

हरेक देश की अपनी अपनी परिस्थिति के अनुरूप ही वहा के राष्ट्रीय और उससे नीचे के स्तर का सगठन शाखाओं की नीतियो और कायक्रम निर्धारित किए जा सकते है। जब प्रत्येक देश मे शोषण विहीन व्यवस्था कायम हो जायगी तो शिक्षकों के सगठनो के वतमान ढाचा म काफी परिवतन हो जायगा और तब परस्पर की दूरिया भी समाप्त हो जायेंगी। हा जो सगठन किसी निहित स्वाथ जनविरोधी सत्ता अथवा प्रतिगामी शक्ति के रूप मे गठित है-वह वास्तविक सघष के दौर म छिन्न-भिन्न हो जायगा या धनी व्यवस्था की मौत के साथ ही मरण को प्राप्त हो जायगा।

शिक्षक सघ एक महासघ के रूप मे विभिन्न श्रेणियो, अर्थात् प्राथमिक, माध्यमिक, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय की अलग-अलग सगठित इकाइयां सम्मिलित हो जाती है तथा अलग-अलग श्रेणियों के अलग-अलग स्वरूप बनाए हुए राष्ट्रीय सगठन अपना-अपना काम करते रहते है। उदाहरण के लिए भारत का AIFEA सब सघो का महासघ होने का दावा करता है किन्तु फिर उसके नेतृत्व की परिधि से बाहर अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक संघ और अखिल भारतीय कालेज और विश्वविद्यालय महासघ भी अलग से राष्ट्रीय स्तर पर अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। एक स्थिति यह भी है कि एक ही श्रेणी के दो प्रतिद्वन्द्वी सगठन भी काम कर रहे हैं जस भारत म राष्ट्रीय स्तर के दो प्राथमिक शिक्षक सघ हैं। देश के अलग-अलग प्रान्तों म तो एक ही स्तर के कई सगठन चल रहे हैं कुछ को सरकार खड़ा किए रखती है तो कुछ को मैनेजमट, किन्तु वास्तविक शिक्षक सगठन वे ही होते हैं जिन्हे आम शिक्षक खड़ा करते हैं और जो नकारात्मक और सकारात्मक दोनो प्रकार के सघर्षों म परिपक्व होते हुए अपनी प्रभावकारी भूमिका अदा करते हैं।

यहां इस बात पर ध्यान केंद्रित करना बिल्कुल उचित होगा कि अब तक विश्व शिक्षक सगठन तथा क्षेत्रीय शिक्षक सगठनो के विभिन्न पहलुओं पर नहीं के बराबर शोधकाय किया गया है। सगठनो की सरचना उनके विधान, उनकी

प्रकृति और प्रवृत्तियाँ, उनकी योजनाएं, कार्यक्रम और नीतियां, उनकी घोषणाएं उनकी सक्रियताएं और उनका प्रभाव आदि विषयों पर सामग्री एकत्रित की जानी चाहिए और एक इतिहास की रूपरेखा निर्धारित की जानी चाहिए। इससे एक ओर शिक्षकों के भावी नेताओं का प्रशिक्षण हो सकेगा शिक्षा की भावी दिशा स्पष्ट हो सकेगी और शिक्षकों में आत्मगौरव की भावना जाग उठेगी कि जिसके फलस्वरूप शिक्षा विकास के अनेक नए आयाम दिखाई देने लगेंगे। इसी में छात्र अभिभावकों और कुल मिलाकर समग्र समाज तथा उसके व्यापक स्वरूप अखिल मानवता को नए रचनात्मक ध्येय की ओर प्रेरित किया जा सकता है।

ई डब्लू फ्रेंकलिन के सर्वेक्षण के अनुसार भारत में शिक्षक संघ का श्रीगणेश महिला शिक्षकों ने सन 1810 ई में मद्रास में 'Women Teachers Association (महिला शिक्षक संघ) की स्थापना करके किया, जिसने लगातार पांच वर्ष तक प्रयत्न करके (मद्रास टीचर्स गिल्ड (महिला और पुरुष शिक्षकों का संयुक्त संगठन) के रूप में अधिक व्यापक संगठन की नींव डाली।

राष्ट्रीय स्तर के शिक्षक संगठनों में सबसे पुराना सन 1925 में कानपुर में स्थापित 'आल इंडिया फैडरेशन आफ टीचर्स एसोसिएशन्स (AIFTA) जो सन 1933 में नामांतरित होकर 'आल इण्डिया फैडरेशन आफ एजूकेशन एसोसिएशन्स (AIFEA) हो गया। सन 1955 में 'नेशनल एसोसिएशन आफ टीचर एजूकेटर्स, सन 1954 में आल इंडिया प्राइमरी टीचर्स फैडरेशन सन 1956 में 'आल इण्डिया साइंस टीचर्स एसोसिएशन, सन् 1961 में 'आल इण्डिया सैकण्डरी टीचर्स फैडरेशन (AISTF) और सन् 1961 में ही आल इण्डिया फैडरेशन आफ यूनिवर्सिटी एण्ड कालेज टीचर्स आर्गेनाइजेशन्स (AIFUCTO) की स्थापनाएं हुईं। बस सन् 1909 में 'साउथ इण्डिया टीचर्स यूनियन' और सन् 1953 में साउथ इण्डिया टीचर्स यूनियन कौंसिल आफ एजूकेशनल रिसर्च नाम से उपराष्ट्रीय संगठन भी स्थापित किए गए। शिक्षक संगठनों में नार्थ इण्डिया नाम से कोई संगठन नहीं बना।

इनके अतिरिक्त भारत के प्रत्येक प्रांत में प्रांतीय स्तर के एक या अनेक शिक्षक संगठन विभिन्न नामों से स्थापित किए गए। किसी प्रांत में सभी संगठनों ने मिलकर एकीकृत फैडरेशन बनाया और कहीं-2 बिना किसी एकीकृत अनुशासन के ही शिक्षक संगठन काम कर रहे हैं।

राष्ट्रीय स्तर के ये सगठन ग्राम शिक्षक के सम्मान के पात्र नही बन सके। AIFEA और NEA ने शिक्षकों के हितों के लिए कभी कोई सघर्ष नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि भारत मे अखिल भारतीय प्राथमिक सघ, अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक सघ और अखिल भारतीय विश्वविद्यालय और कॉलेज शिक्षक महासघ अपना पृथक अस्तित्व बनाए हुए काम कर रहे हैं और अपने-अपने वर्ग के अध्यापकों का सम्मान प्राप्त करने मे सफल हो रहे है। जबकि AIFEA का आम अध्यापक मे कोई सम्मान नहीं है। वह केवल नेताओं, पार्टियों, पण्डितों और मुल्लाओं का प्रतिनिधि सगठन बनकर रह गया है। NEA का भी अमरिका मे यही हाल है। अमरिका फेडरेशन आफ टीचर्स (AFT) ने उसके बडबोलेपन की पोल खोल दी। उसने अमरिका के शिक्षकों के हितों के लिए सघर्ष करके उनका सम्मान प्राप्त किया है। जैसा कि श्री वेदप्रकाश वटुक ने कहा है कि— इसके नेतृत्व मे नयी पीढी का नया छात्र, नया युवक अध्यापक बदल रहा है विगत की सोई पीढी का चिह्न। और इस सबके साथ बदल रहा है अध्यापन का पेशा। विश्व की स्वाधीनता के लिये लडने वाला शिक्षक समाज बदल रहा है अपने विचार मागता है अपने विधान, अपनी आचार सहिता, अपना तन्त्र और अपने जीवन को ढालने की शक्ति।'

—(अमरिकन जन और शिक्षक-आन्दोलनो का नया मूड—वटुक)

रूस अमरिका, भारत, चीन, इगलैंड जर्मनी (दोनो), वियतनाम, जापान हगरी चेकोस्लोवाकिया, फ्रास इटली पोलैंड, आस्ट्रेलिया कोरिया (दोनो) आदि दुनिया भर के सभी देशो के राष्ट्रीय और प्रातीय शिक्षक सगठनो की शक्ति के प्रभाव का पूरा ब्यौरेवार विवरण दिया जाना चाहिए किन्तु ऐसा कर सकना इस सीमित आकार मे सम्भव नही दिखाई देता। हाँ, यह निर्विवाद सत्य है कि विभिन्न शिक्षक सगठन दोनो प्रकार के सघर्षों का सचालन करने मे अहम भूमिका अदा कर रहे हैं—नकारात्मक सघर्ष वहा जहा उनकी आर्थिक समस्याए हल न की जा रही हो—प्रदर्शन धरने, भूख हडताल आदि के रूप मे, और दूसरा सकारात्मक सघर्ष जहा शिक्षा के सर्वतोमुखी विकास को प्रभावित करना हो—सरकार के माध्यम से, अपनी पाठ्यक्रम सम्बन्धी योजनाओ और शिक्षक परिषदो के प्रस्तावो आदि के माध्यम से या विभिन्न आयोगो, समितियो और बोर्डो आदि मे अपने प्रतिनिधि के द्वारा।

इन सबके अतिरिक्त आज शिक्षक सगठन, चाहे वह FISE और उससे सम्बद्ध सगठन हो, अथवा WCOTP और उससे सम्बद्ध सगठन-युद्ध को रोकना, विश्व शाति की रक्षा करना, आणविक हथियारो का परिसीमन या उन पर प्रतिबध लगाना रग भेद की नीति को समाप्त करना राष्ट्रीय मुक्ति आदोलनो का समर्थन देना गुट निरपेक्ष देशो के शाति प्रयासो और अविकसित देशो के आर्थिक विकास सम्बधी योजनाओ का समर्थन करना, समाज मे शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक वातावरण पैदा करना शोषण से मुक्त समाजवादी समाज की रचना मे सहयोग देना और उन्नत लोकतान्त्रिक और सास्कृतिक मूल्यो की स्थापना मे सक्रिय योग देना आदि अपना उत्तरदायित्व समझते है। वियतनाम के शिक्षक को अभ्यास हुए हाथ मे बदूक रखने, बगल मे रोज ब्लैक बोर्ड रखने और दूसरे हाथ मे चॉक रखना था। जगखोर स्कूल को जलाते हैं, शिक्षक की हत्या करते हैं-इसलिए कि न रहे बास, न बजे बासुरी न रहे शिक्षक और न रहे जिसको तैयार कर सके वह नई सूझ नई ताकत का वह इसान जो विध्वस के भय से निर्माण के सुख को, कभी तिलाजलि नही दे सकता। क्या हुआ जो विश्व के लाखो शिक्षक नेताओ मे से कुछ अपरिपक्व, स्वार्थी धोखेबाज दगाबाज निकल जाय, किन्तु सब मिलाकर देखा जाय तो शिक्षक सगठन और उनके नेतृत्व का चित्र अपेक्षाकृत दूसरो से बहुत सुदर और अधिक गौरवपूर्ण है।

प्रातीय स्तर के सगठनो मे मद्रास शिक्षक सघ मद्रास (1890), मद्रास शिक्षक गिल्ड (1895) अराजपत्रित शिक्षा अधिकारी सघ उत्तर प्रदेश (1920) यूरोपियन स्कूल प्रधानाध्यापक सघ, उत्तर प्रदेश (1920), उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षक सघ (1921) उत्तर प्रदेश अध्यापक मण्डल (1921), आल इडिया टीचर्स एसोसियेशन (ABTA-1921) बिहार उडीसा अधीनस्थ सेवा सघ (1924), बिहार वर्नाक्यूलर टीचर्स एसोसियेशन (1924) बिहार उडीसा माध्यमिक शिक्षक सघ (1924) सेन्ट्रल प्रोविन्सेस एड बरार टीचर्स एसोसिएशन (1924), बाम्बे प्रेसीडेंसी हाई स्कूल हैडमास्टर्स कान्फ्रेंस (1924), बडौदा माध्यमिक शिक्षक सघ (1924), बिहार स्कूल टीचर्स एसोसियेशन (1925), बगाल टीचर्स लीग (1927) मैसूर सैकण्डरी टीचर्स फैडरेशन (1927), वेस्ट बगाल प्राइमरी टीचर्स एसोसिएशन (1937), उडीसा सैकण्डरी स्कूल टीचर्स एसोसिएशन (1942), महाराष्ट्र स्टेट फैडरेशन आफ हैड मास्टर्स एसोसिएशन (1944), विदर्भ फैडरेशन आफ सैकण्डरी स्कूल टीचर्स एसोसिएशन (1946) प्रोविन्शियल फैडरेशन आफ सैकण्डरी स्कूल टीचर्स एसोसिएशन मध्यप्रदेश (1946), स्टेट टीचर्स यूनियन, आध्रप्रदेश (1946), राज

रधात शिक्षक सघ (1952), करल एडड प्राइमरी टीचस यूनियन (1958) की यह सक्षिप्त स्थापना तालिका है। सम्भव है सूचना के अभाव म कुछ नाम छूट गए हो और यह भी एक स्थिति है कि इनम से कुछ प्रातीय सगठन कई नए रूपा म अथवा किन्ही आधार पर अन्तर विभाजन के फलस्वरूप पृथक सत्ता में आ गए हैं। यह कवल सकेत है सपूणता का दावा नही।

इन प्रातीय सगठना म स भी कुछ अपना सीधा सम्ब ध विश्व के किसी शिक्षक महासघ स जोडे हुए है। यहा भी वाम और दक्षिण विचारधारा के कारण उनका प्रसग 2 जुडाव है। यह एक अनोखा तथ्य है कि वाम और दक्षिण विचारधारा पचायत, तहसील, जिला प्रांत और देश म प्रवाहित होती हुई अन्त म अपने महासागर (विश्व शिक्षक महासघ) म समाहित हो जाती है। समाज व्यवस्था के एक होने पर ही यह अलगाव दूर होगा। नीच स ऊपर तक की विचार समता को उपर नीचे स ऊपर तक के प्रस्तावो का अध्ययन करके ही पहचाना जा सकता है। AIFEA के प्रस्तावो और काय प्रणाली म तथा WCOTP के प्रस्तावो और कायप्रणाली म सैद्धान्तिक एकता मिलगी, जबकि AIFUCTO और FISE के प्रस्तावो और कायप्रणाली म तात्विक एक रूपता परिलक्षित होगी। विभि न सगठनो के पारस्परिक जुडाव, सामाजिक आर्थिक, राजनतिक और सास्कृतिक विचार भी नीचे स ऊपर तक तदनुकूल हो मिलग। आज नितात 'तटस्थता' की बात करना छलावा और भुलावा मात्र ही होगा।

प्रातीय सगठनो की एक विशेषता यह भी है कि सगठना का वास्तविक सघषक्षेत्र भी वही है। राष्ट्रीय स्तर के सघष तो कभी कभार ही होते हैं किन्तु प्रातीय सघष और सगठन की रचनात्मक गतिविधिया अनवरत रूप स जहा चलती रहती हैं वे हैं प्रातीय और उसके आगिक जिला स्तरीय काय क्षेत्र। समाज म जहाँ कही पर किंडर गाडन से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की कोई भी सस्था काय कर रही है–शिक्षक सगठन स अप्रभावित नही हो सकती, समाज म सरकारी या गर सरकारी कोई भी शक्षिक विभाग या कार्यालय एसा नही ह जो शिक्षक सगठन से अप्रभावित हो और ससार की कोई भी सामाजिक, आर्थिक, राजनतिक और सास्कृतिक गतिविधि नही जो शिक्षक सगठन के महत्त्वपूण तत्त्व शिक्षक शिष्य और अभिभावक से अप्रभावित हो–शिक्षक सगठन से अप्रभावित हो। शिक्षा के स्तर और शिक्षा म परिवतन, छात्रो और शिक्षको के बीच अनुशासन और पारस्परिक सम्ब ध, अभिभावको का दायित्व आदि विषयो की

चर्चाएं इतनी सर्वव्यापी हैं कि समझदार और ना समझ हरेक 'विशेषज्ञ' बनकर शिक्षा और संगठन पर टीका टिप्पणी करता है। ऐसा करते समय 'शिक्षक संघ' की भूमिका का उल्लेख करना भी आजकल की प्रवृत्ति या फैशन हो गई है। कहना पड़ेगा कि शिक्षक संघ कहीं होवे की तरह आतंकित कर रहा है, तो कहीं दाशनिक की तरह मार्ग दिखा रहा है, कहीं दबाव डाल स्थितियों को सुधार की मजबूरियां और परेशानियां पैदा कर रहा है तो कहीं बलिदानी प्रेरणाएं देकर भयमुक्ति का वातावरण भी बना रहा है और इसी प्रकार कहीं वह गणेश की तरह विघ्न विधायक की भूमिका अदा करता है तो साथ ही विघ्न विनाशक की भूमिका भी।

सन् 1983

व्यावसायिक संगठन की प्रकृति और शिक्षक-संघ

दलगत प्रजातान्त्रिक राजनीति का केन्द्र बिन्दु अर्थव्यवस्था है। अतः इसी अर्थव्यवस्था के इर्द गिर्द सारे दल चक्कर लगाया करते हैं। अर्थव्यवस्था राजनीति के माध्यम से सरकार का निर्माण करती है समाज की भली बुरी व्यवस्था देती है विभिन्न जन संगठनों, व्यावसायिक संगठनों एवं विविध प्रकार के सांस्कृतिक संगठनों को जन्म देती है, पनपाती है और उन्हें हथियार के रूप में काम लेती है। इसलिये कोई भी किसी भी प्रकार का संगठन मूलतः अर्थ व्यवस्था सम्बन्धी किसी मान्यता से संबद्ध राजनैतिक दल से असम्बद्ध तथा अप्रभावित नहीं रह सकता। सभी व्यावसायिक संगठन अन्य संगठनों के समान किसी न किसी राजनैतिक दल से अनिवार्य रूप से जुड़े हुए रहते हैं– यह उनका वस्तुगत सत्य है, उनकी प्रकृति है।

यह झूठ है कि फलां व्यावसायिक संगठन राजनीति से जुड़ा हुआ नहीं है। यह और भी झूठ है कि फलां व्यावसायिक संगठन में प्रमुख भाग लेने वाले कार्यकर्त्ताओं का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सम्बन्ध किसी राजनीति के साथ नहीं है। संगठन कर्त्ता ही क्या, दलगत प्रजातन्त्र का प्रत्येक व्यक्ति जिसे नागरिक अधिकार प्राप्त है–राजनीति से अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। मजदूर यूनियन का ट्रेड यूनियनिस्ट, किसान संघ का नेता, अध्यापक संघ का अध्यक्ष या मंत्री, किसी जिले

का कलेक्टर, सचिवालय का सचिव, शिक्षा विभाग के इस्पैक्टर या डायरेक्टर आदि सभी किसी न किसी राजनीति से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अनिवार्यत जुड़ हुए हैं-तटस्थता एक निरा ढोंग और पाखंड है। अधिकारियों द्वारा किसी व्याव सायिक संगठन के कार्यकर्त्ता को 'राजनैतिक' कहकर उसे सजा देना और संगठन को विघटित करने की चेष्टा एक प्रजातांत्रिक अपराध है।

शिक्षक संगठन की अपनी एक प्रवृति है। वह एक व्यावसायिक संगठन है एक ट्रेड यूनियन (इसके अतिरिक्त वह कुछ और हो ही नहीं सकता)। यह संगठन मध्यम वर्ग के लोगों का होता है। यह मध्यमवर्ग की सारी विशेषताएं और कमजोरियाँ होती हैं। मध्यवर्ग संगठित होने में झिझकता है-अतः यह संगठन भी संगठनात्मक शक्तियों का शिकार बना रहता है। मध्यमवर्ग की पलायनवादी प्रवृत्ति शिक्षक संगठन के शक्ति संचयन में बाधक सिद्ध होती है। वैचारिक उलझनें संगठन को आदर्श और यथार्थ के बीच में झूलते रहने को विवश कर देती हैं। मध्य वर्ग की टालने की प्रवृत्ति संगठन को ट्रेड यूनियन या ढीलेपन से पीछे धकेल देती है। मध्यवित्त की शालीनता का प्रभाव संगठन के समारोहों की शालीनता के रूप में देखा जा सकता है। कला साहित्य और संगीत की प्रवृत्तियाँ स्पष्टतया दूसरे संगठनों की अपेक्षा उन्नततर स्तर पर विकसित हुए दिखाई देंगी। इसी प्रकार आदर्शवाद की भनक सुधारों के बड़े बड़े सुझावों को प्रस्तुत करने में दिखाई देगी। हाँ शिक्षक संगठन की इस प्रकार की प्रवृति में प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च श्रेणी के शिक्षकों के मानसिक धरातल (जिस पर आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है) के अनुसार स्तरीय अन्तर होता है।

व्यावसायिक संगठन के उद्देश्य को समझने के लिए उसकी पृष्ठभूमि में निहित राजनैतिक अर्थशास्त्र का समझना नितान्त आवश्यक है। हर शिक्षक संगठन को भली प्रकार समझने के लिए यही आधार सामने रखना अनिवार्य हो जायेगा।

आज का संसार दो प्रकार की अर्थ व्यवस्थाओं में विभाजित है और इसी तरह दो प्रकार की राजनीतियों में-एक ओर पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और राजनीति है तथा दूसरी ओर समाजवादी अर्थ व्यवस्था और राजनीति। संसार का प्रत्येक राजनैतिक दल बुनियादी रूप से इन दो में से किसी एक पंक्ति में खड़ा है। तटस्थ कोई भी राजनैतिक दल नहीं। इसी प्रकार प्रत्येक जनसंगठन अथवा व्यावसायिक संगठन इन्हीं दोनों कतारों में से किसी एक कतार में अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है-तटस्थ कोई भी नहीं है।

विश्व के शिक्षक सगठन इसी आधार पर चाहे वे विश्वव्यापी आधार पर हो, चाहे राष्ट्रीय स्तर पर, चाहे प्रातीय स्तर पर अथवा चाहे इससे भी किसी छोटे पर हो—ये म म किसी एक प्रकार की अर्थ व्यवस्था के—किसी एक प्रकार की राजनीति क परिपोषक है पू जीवादी मान्यता द्वारा स्थापित एक विश्व शिक्षक सघ और समाजवादी मान्यता द्वारा स्थापित दूसरा विश्व शिक्षक सघ। राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षक सघो का गठन अर्थ यवस्था की मा यता के अनुसार ही बटा हुआ ह। भारत जसी मिश्रित अर्थ-यवस्था के देश मे शिक्षक-सगठन दो हिस्सो मे बट हुए हैं।

जिस क्षेत्र म पू जीवादी मान्यता वाली राजनीति का प्रभाव प्रमुख होगा उस क्षेत्र म व्यावसायिक सगठनो पर पू जीवादी मा यता पर चलने वाले राजनतिक दल का प्रभाव रहगा, इसी प्रकार जिस क्षेत्र म समाजवाद सापेक्ष राजनतिक दल का प्रभाव होगा उस क्षेत्र म व्यावसायिक सगठनो पर समाजवादी मा यता वाले राजनीतिक दल का ही प्रभाव प्रमुख रूप से रहगा। उदाहरण के लिए केवल जसे राज्य म व्यावसायिक सगठनो पर वामपथियो का प्रभाव प्रमुख रूप से रहेगा और राजस्थान जसे राज्य म काग्रेस और जनसघ जसे दक्षिणपथी दलो का। बगाल मद्रास, पजाब और उडीसा आदि क्षेत्रो की विधान सभाओ की दलगत स्थिति का जाच कर उनम चलने वाले व्यावसायिक सगठनो पर पडने वाले राज-नतिक प्रभाव को परखा जा सकता है। यहा एक बात यह भी ध्यान म रखने की है कि व्यावसायिक सगठनो पर प्रशासकीय दल की अपेक्षा विरोधी दल की राजनीति का प्रभाव अधिक व्यापक होता है। यह इसलिए कि सगठन विरोध म ही शक्ति सचय करने म अधिक समर्थ होता है। यो तो प्रजातत्र म सभी राज नतिक दल व्यावसायिक सगठनो म प्रवेश पाने की चेष्टा करते है, फिर भी विरोधी दल विरोध के बल पर अपना असर कायम करने म ज्यादा कामयाब होता है।

व्यावसायिक सगठनो का ऊपरी उद्देश्य तो वर्गहित की रक्षा करना और अपने वर्ग के आर्थिक और सास्कृतिक विकास की ओर कदम बढाना होता है किन्तु बुनियादी तौर पर व उस उद्देश्य की सिद्धि म सहायक होते है जिस उद्देश्य को लेकर उन पर प्रभाव रखने वाला राजनतिक दल काम कर रहा है। दक्षि-पथी राजनीति का असर जिन व्यावसायिक सगठनो पर है वे [illegible] किन्तु अनिवार्यत उस अर्थव्यवस्था को [illegible] म सहायक होते हैं—इसी प्रकार वाम पथी राजनतिक दल के असर समाजवादी क्राति म सहायक अथवा समाजवादी [illegible]

सरक्षण म अनिवायत सहायक होगे। इस सत्य से आख मूदने वाल व्यक्ति या तो राजनैतिक सूझ स शून्य हैं अथवा व झूठ को प्रश्रय दने वाल हैं।

समाज सघष करता हुआ विकास के मार्ग को निरतर तय करता हुआ आगे बढ़ता है। यह सघष विचार गोष्ठिया म भी दिखाई दे सकता है, विधान सभाओ एव ससद् के भवना म भी दखा जा सकता है और हडताला और सशस्त्र विद्रोह के रूप म भी। सघष परिवतन की बुनियादी शत ता है ही, साथ ही निर्माण की बुनियादी शत भी है। जिनकी नजर सूक्ष्म पयवेक्षण करन म असमथ है उ ह निर्माण म किए जान वाले सघष दिखाई नही दत। कहने का तात्पय है कि विकास का प्रमुख आधार सघष है। यह सघष दा शक्तिया म होना है जिनको समाज शास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली म 'प्रतिगामी' और 'अग्रगामी' कहा जाता ह। प्रतिगामी शक्तिया शाषण की रक्षा करन के लिए तयार की जाती हैं जिनके खिलाफ 'अग्रगामी' शक्तिया समाज का शोषण के अत्याचारा से मुक्त करन के लिए उभर आती है। इन दो प्रकार की शक्तिया म सघर्ष चलता जाता है। प्रतिगामी शक्तिया इस सघष म अतत बिखर कर टूट जाती हैं जबकि अग्रगामी शक्तिया अपनी अतर्निहित जीवनशक्ति के कारण ताकत ग्रहण करती जाती हैं। परिणाम यह होता है कि अग्रगामी शक्तिया जीत जाती हैं।

समाज के इस सघष म उसकी प्रत्यक इकाई को हिस्सा लेना पडता है- इकाई व्यक्ति के रूप म हो चाह सगठन के रूप म हो, कोई भी व्यक्ति अथवा शिक्षक सगठन भी सघष स अप्रभावित ही नही रह सकता, अपितु वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप स उसम हिस्सा भी लता है।

सामाजिक सघष म प्रतिगामी राजनतिक दल और उनस प्रभावित व्याव सायिक सगठन भी हिस्सा लेते हैं और अग्रगामी राजनतिक दल और उनस प्रभा वित व्यावसायिक सगठन भी। प्रतिगामी तत्त्व सघष को कुचलन म और अग्रगामी तत्त्व सघष को तज करके समाज को जीत की मजिल तक पहुचान के लिए सघष म हिस्सा लेते हैं। प्रतिगामी तत्त्व धीरे धीरे कटकर पराजय म समाहित हो जाते है क्योकि उनम जीवित रहने की शक्ति अतर्निहित नही जबकि जीवन शक्ति स युक्त अग्रगामी तत्त्व धीरे धीरे प्रतिगामी तत्त्वा स टूटकर उधर मिलने वाल तत्त्वा को मिलाकर अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं और अ तत विजयी हो जाते हैं। प्रतिगामी राजनतिक दला की पहचान उनके द्वारा निर्धारित समाज की आर्थिक योजनाओ की छानबीन करने स होती है और इसी प्रकार अग्रगामी दला की

पहचान उनके द्वारा निर्धारित समाज की आर्थिक योजनाओं की छानबीन करके की जा सकती है। व्यावसायिक संगठनों की प्रतिगामिता और अग्रगामिता का पता उनके द्वारा निर्धारित नीति और कार्यक्रम की छानबीन करने से लगाया जा सकता है और इसी के आधार पर पराजय और विजय का, उनके मरण और जीवन का, अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। प्रतिगामी प्रतिक्रियावादी शक्तियों का क्रमशः ह्रास और अन्ततः पतन अवश्यम्भावी होना है यह एक ऐतिहासिक सत्य है।

इस संक्षिप्त विश्लेषण के आधार को दृष्टि में रखकर यदि हमारे व्याव-सायिक संगठनों-शिक्षक संघों की नीति उनके द्वारा निर्धारित कार्यक्रम [illegible] उनके क्षेत्र में संचालित करने वाले प्रतिगामी अथवा अग्रगामी-[illegible] के प्रति अनास्थावान अथवा प्रगतिवादी-पूंजीवादी, [illegible] समाजवादी साम्यवादी राजनैतिक दलों के प्रभाव की जांच [illegible] तो आसानी से परिणाम का अनुमान लगाया जा सकेगा। [illegible] द्वारा की जाने वाली गद्दारी अथवा आस्थावान हुआ जा सकेगा। [illegible] संघ में विजयी होकर समाज का सही निर्माण कर सकने में [illegible] वस्तुनिष्ठ कल्पना की जा सकती है। आज [illegible] में संचालित तत्वों का असर है [illegible] जाति में जीवित रहने और जीवन के लक्ष्य हैं [illegible]। [illegible] अथवा विनाश की ओर ही जाता है [illegible] विवशता होता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य मे

चुनौतिया और सघर्ष

यदि कोई सत्ता स्वय कह कि मूल्या का तजी स ह्रास हा रहा ह और 'स्कूला, कालजा तथा विश्वविद्यालया म छात्रा और शिक्षको म' भी ह्रास की स्थिति ही व्याप्त है वह मानती है कि शिक्षक हताश है, कामचार ह और अथवादी है तो एक पत्रकार कालम लिख मारता है कि आजादी के बाद यहा आयकर की चोरी, तस्करी मुनाफाखोरी मिलावट, कालाबाजारी आदि क कारण आर्थिक क्षेत्र म मूल्या का ह्रास हाता चला आ रहा है और अथव्यवस्था का गरीबी शोषण, महगाई और सकटपूण विषमता न बरबाद कर दिया है। यहा महिला अशिक्षा दहज बलात्कार अधविश्वास, निरक्षरता असभ्यता सस्कृतिहीनता जातिवाद, साम्प्रदायिकता और क्षत्रीयता आदि क कारण सामाजिक क्षत्र म मूल्या का ह्रास हा रहा ह अलगाववाद, उग्रवाद क या आतकवाद विघटनवाद और भीतरी और बाहरी षडयत्रा आदि गद्दारी नौकरशाही अथवा अफसरशाही की धूतता तथा कामचोरी के कारण प्रशासकीय मूल्या का ह्रास हो रहा ह और चाटुकारिता अवसरवादिता, सुविधापरस्ती भ्रष्टाचार एय्याशी झासबाजी और भाई भतीजावाद क कारण राजनतिक मूल्या का ह्रास हा रहा है। इस प्रकार मूल्या के ह्रास का रोग छाट स लकर बडे से बडे व्यापारिया छोटे से लेकर बडे म बडे मत्रिया, छोट स लकर बड स बड अफसरा कमचारिया डाक्टरा इजीनियरा, दूकानदारो तथा खोमचेवाला म अर्थात सभी क्षेत्रा म फल चुका है।

मूल्या के ह्रास के कारण समस्याए है अवरोध हैं, विषमताए हैं दुखदद ह और साथ ही चुनौतिया भी ह समाज के हर क्षत्र म सामाजिक चुनौतिया जसे शिक्षा के हर क्षत्र म शिक्षा की चुनौतिया। यहा सबस बडा प्रश्न अथात प्राथमिकता के क्रम मे सर्वोच्च प्रश्न ह कि आखिर मूल्या के ह्रास का कारण क्या है उसक लिए उत्तरदायी कौन है और फिर इसका इलाज क्या

है। यदि वैज्ञानिक विश्लेषण करके इस का सही तौर पर साफ साफ उत्तर नहीं दिया गया तो समाज की हर चुनौती की तरह "शिक्षा की चुनौती" का भी कोई ठोस समाधान नहीं होगा 'छुटपुट परिवर्तनों से' अथवा कुछ पत्ते काटने भर से 'व्यापक सुधार नहीं हो सकता' संतोष करना हो तो बात जुदा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दस्तावेज में मूल्यों के ह्रास का आर्थिक सामाजिक आधार पर वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं किया गया और जब ऐसा नहीं तो ह्रास के कारण के दो टूक साफ शब्दों में बताने का तो प्रश्न ही कैसे उपस्थित हो सकता है। जब नींव और संरचना को ही दृष्टि ओझल कर दिया गया तो संवेदनशीलता की बात का औचित्य ही कहां रह जायगा। जो कुछ कहा गया है वह गोलमोल भाषा में और मूल से भटकाने की नीयत से कहा गया है। उदाहरण के लिए 'शिक्षा और उसकी सभी शाखाओं को तब तक पर्याप्त रूप से नहीं बदला जा सकता जब तक कि पूरी सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था के बदलने के लिए ऐसे परिवर्तन न किए जायं' को यदि सही रूप से रखा जाता तो यह कहा जाना चाहिए था कि 'शिक्षा और उसकी सभी शाखाओं को तब तक पर्याप्त रूप में नहीं बदला जा सकता जब तक कि पूरी सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था को बदलने के लिए आमूल परिवर्तन न कर दिए जायं।' वस्तुतः सामाजिक नैतिक मूल्यों के ह्रास को रोकने अथवा मूल्यों को ऊंचा उठाने का मतलब है सामाजिक आर्थिक असमानताओं को जड़ से उखाड़ फेंकना। सामाजिक नैतिक मूल्यों के ह्रास की जड़ सामाजिक आर्थिक असमानताओं में है। सामाजिक आर्थिक असमानता में वास्तविक समानता के होने की आशा करना कोरी कल्पना मात्र होगा।

अनुकूल होगा, शिक्षाव्यवसायी, शिक्षाशापक और सुविधाभोगी उच्चवर्ग के लोग चाहे वे धनिक हों, चाहे अफसरशाह अथवा चाहे यथास्थितिवादी–ये सब प्रतिकूल होंगे, उन बेचारों को तकलीफ होगी क्योंकि उनके बाजार और वर्चस्व लुट जायेंगे।

बहरहाल, शिक्षा में वांछित और उपयोगी आमूल परिवर्तन के लिए भारत सरकार के लिए यह प्रथम आवश्यकता है कि वह गांवों के भूमिहीनों में तत्काल भूमि का समान वितरण करके इस धरती से सामंतवाद और उसके अवशेषों को पूरी तरह समाप्त कर जिससे जहां कहीं शिक्षा की किसी संस्था अथवा शिक्षा के किसी क्षेत्र पर धनी जमींदारों का जो भी प्रभाव हो उसका उन्मूलन किया जा सके। इसके साथ ही सरकार भारत के 22 इजारेदार घरानों के उद्योगों को सार्वजनिक क्षेत्र में ले और इसके साथ ही इन घरानों द्वारा चलाई जाने वाली शिक्षण संस्थाओं का अविलंब अधिग्रहण कर ताकि शिक्षा इन एकाधिकार पूंजीपतियों द्वारा किए जाने वाले शोषण का साधन बने रहने से मुक्त हो जाय। ख्याल रहे इन बड़े घरानों की शिक्षासंस्थाएं न तो अल्प-संख्यक शिक्षा का अंग ही हैं और न ही वे भारतीय समाज की सामाजिक आय को ही मदद पहुंचाती हैं।

इस प्रकार शिक्षा के सामंती और एकाधिकार पूंजीवादी चंगुल से छुड़ाकर शिक्षा में पहला रचनात्मक क्रांतिकारी कदम उठाया जा सकता है। आज केन्द्रीय सरकार इसमें सक्षम है हमारे लोकतंत्र में यह संभव है संविधान इसके पक्ष में है और भारत की 99 प्रतिशत जनता की यह प्रबल आकांक्षा है, क्योंकि यह उसके हित में है। इसके विरोध में केवल निहित स्वार्थी शोषकवर्ग और उसके दलाल बुद्धिजीवी ही होंगे।

दूसरा सुझाव यह कि सरकार साम्राज्यवादी देशों की आर्थिक सहायता से चलनेवाली शिक्षणसंस्थाओं और शोधसंस्थाओं का पूर्णतया समाजी-करण करे और शिक्षाविशेषज्ञों के रूप में विदेशी गुप्तचरों को वापिस उनके देश भेजकर शिक्षाप्रदूषण को दूर करे। आज केन्द्रीय सरकार इसमें सक्षम है हमारी लोकतंत्रीय व्यवस्था में यह संभव है, संविधान इसके पक्ष में है और भारत की 99 प्रतिशत जनता की यह प्रबल आकांक्षा है क्योंकि इसमें भारत की सुरक्षा निहित है।

इन उपयुक्त दोना क्रांतिकारी सुझावा की क्रियान्विति मे न कोई बाधा ह और न कोई अडचन और यदि कुछ हो ता उसे भारतीय जनता के हित को ध्यान म रखते हुए जहरीले फोडे की तरह काटकर फेंक देना चाहिए क्योंकि ये सुझाव प्राथमिक ह, अनिवाय ह, शिक्षा के क्रांतिकारी रूपातरण के लिए एकमात्र विकल्प है और नई शिक्षानीति की सफलता की गारटी है। यह आग के इतिहास की तकसगति ह जिसे यदि स्वीकार नही किया जाता ह ता इसे नीयत की कमी के अलावा और कुछ नही कहा जा सकता।

हम अपन इस दश पर गव करन का यह हक ह कि उसकी जनना न सन 1803 स लकर सन 1947 तक के 150 साला म लगातार स्वतत्रता के लिए अथक सघप किया और इस सुदीधकालीन स्वाधीनता-सग्राम का एक महत्वपूण भाग नौकरशाही का पदा करनवाली और बाबू पदा करनवाली औपनिवेशिक शिक्षानीति के खिलाफ सघप करना ही था। कौन कहता है कि हमारे राष्ट्रीय स्वाधीनता आदोलन ने सन 1904 और सन 1913 की रेल और सडलर आयागा की ब्रिटिश शिक्षानीति के प्रस्तावा के खिलाफ आवाज बुलद नही की ? कान कहता ह कि मकाल की धीगामस्ती के आग हम नतमस्तक हा गए ? वुड, हटर, कजन रेले सडलर, सार्जेंट का क्या सरेआम हमने नही ठुकराया ? क्या शिक्षा और सस्कृति के बारे म राममोहन राय, रवीद्र नाथ टगोर गोखल लाला लाजपत राय जवाहरलाल नहरू और महात्मा गाधी न अपन-अपन शिक्षा विकल्प नही प्रस्तुत किए ? अत यह एतिहासिक सत्य है कि शिक्षा स्वतत्रता आदालन' का एक प्रमुख मुद्दा रही है। लाला लाजपत राय न सन 1920 म प्रकाशित अपनी पुस्तक 'भारत म राष्ट्रीय शिक्षा की समस्याए' म कहा था- शिक्षा एक निर्धारित साध्य का साधन हाती है। साध्य जीवन और उसकी वह प्रगति ह जा अनवरत अनत और अबाध हाती ह।'

सन 1930 म अपनी जनशिक्षण रचना म रवीद्र नाथ टगोर न कहा था-"समस्त युगा म सभ्य जातियाँ अनक अभाग्र और अनेक लागा के समूहा म भरपूर रहती है। व बहुमत म हात ह-भारवाही पशुआ की स्थिति म जिनक पास 'मनुष्य बनन का समय नही हाता। व समाज की जूठन पर पलन का मजबूर हात ह, सबसे कम खान और सबसे कम पहनन का उन्ह दिया जाता

है, उन्हें शिक्षा का कोई मौका नहीं मिलता यद्यपि ये सबकी सेवा करते हैं।"
और 27 दिसम्बर सन् 1939 में अखिल भारतीय शिक्षक सम्मेलन के बारहवें अधिवेशन को संबोधित करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने कहा था–

'हमारा वर्तमान सामाजिक ढांचा जर्जर और मरणासन्न हो चुका है जिसमें उसके खुद के अन्तर्विरोध भरे पड़े हैं। इस खूटखसोट की समाज व्यवस्था को समाप्त करना ही होगा और उसकी जगह ऐसा समाज बनाना होगा जो जहां मानवमूल्यों का सम्मान हो और जिसमें एक वर्ग या समूह या राष्ट्र दूसरे का शोषण न करे। यदि हमारे भावी समाज का यह आदर्श हो तो हमें उस उद्देश्य की पूर्ति के अनुसार शिक्षा का निर्माण करना होगा।'

महात्मा गांधी, जाकिर हुसैन, राधाकृष्णन आजादकी आदि के विषय में कहने की आवश्यकता ही नहीं। सबको एक स्वतंत्रता सेनानी थे जो शिक्षा–संघर्ष के प्रति प्रतिबद्ध और समर्पित थे।

और आज जब मूल्यों के तेजी से ह्रास' होने उस ह्रास के फलस्वरूप उत्पन्न ऊपर कही हुई विकृतियां चारों दिशाओं में ऊपर से नीचे तक उत्तरदायित्वहीनताएं अनियमितताएं और विपन्नताएं विद्यमान हों शिक्षा की चुनौतियां सामने उपस्थित हों तो क्या ये संघर्ष का आमंत्रण नहीं देती? कहीं राष्ट्रीय शिक्षानीति के दस्तावेज में एसे किसी संघर्ष का संकेत है? क्या संघर्ष के बिना इतनी भयंकर सामाजिक शैक्षिक विकृतियां समाप्त हो सकती हैं? क्या घातक विकृतियों और विनाशक गैरजिम्मेवारियों के खिलाफ जिहाद के बिना वकीलों' वाली सहसा से हल निकाल जा सकेंगे? क्या पाठ्यवस्तु पाठ्यपुस्तकें प्रचार–प्रसार के सभी साधनों, औपचारिक–अनौपचारिक शिक्षा संस्थाओं गली कूचों सिनेमा होटलों, चौपालों, चबूतरों सड़कों और आंचलिक पगडंडियों में समस्त विकृतियों के उन्मूलन के लिए संघर्षात्मक वातावरण को खड़े किए बिना आसानी से सफलताएं मिल जायगी? क्या संघर्ष के लिए बलिदानों की आवश्यकता नहीं पड़ेगी?

अधिकारी तंत्र द्वारा बनाए हुए इस दस्तावेज में भाषागत लागलपेट में तो मिलावटी बातें भले ही कही गई हों पर शिक्षा की अंतर्वस्तु और शिक्षासाधना की अंतश्चेतना को संघर्ष की ऊर्जा से ऊर्जस्वित नहीं किया गया है? यही इसकी दूसरी सबसे बड़ी कमजोरी है।

इस दस्तावेज म स्थिति का वस्तुगत मूल्याकन किया गया है जो कि उस रूप मे होना ही चाहिए था। इसम यही सही कहा गया ह कि– विगत वर्षों म शक्षिक परिवतन इसलिए सभव नही हुए कि दश के राजनताग्रो और ग्रभिजात्य वग को यह मजूर नही था कि शिक्षा जनसाधारण म समान ग्रवसरा की व्यवस्था बनाने का माध्यम बन सके।' क्या इसके पीछे इदिरा गाधी ग्रौर उनकी नीतियो को ग्रारोपित करके ग्रफसरशाही द्वारा स्वय को बचाने की ग्रथवा इदिरा गाधी से राजीव गाधी को भिन्न या विशिष्ट बताने की ग्रथवा इस ग्राड म एक ग्रौर भासा देकर बुनियादी परिवतना का टालने की घिनौनी हरकत तो नही ह ? श्री ग्रनिल बाडिया एक ग्रोर 'नई शिक्षा नीति की तलाश' म दशव्यापी सार्थक ग्रौर बबाक बहस का ग्रामत्रण' दत हैं ग्रक्टूबर माह म ग्रौर वह भी 'सभी शिक्षका ग्रभिभावका, मजदूर–किसानो छात्र–छात्राग्रा गाया दश के सभी लागो का' दस्तावज की गिनी चुनी प्रतिया पहुचायी जाती हैं चन्द 0 1 प्रतिशत से भी कम लागा का–नतीजतन 99 प्रतिशत स ऊपर शिक्षक (ग्र या की ता बात ही छाडिए) दस्तावेज की शक्ल तक ही नही देख पायेंग ग्रौर ग्रनिल बोडिया नवम्बर माह म बहस बन्द कर देंग। इतना बडा दश ग्रौर यह 'बेबाक बहस की ग्रवधि की सीमा' क्या यह पूर्वनियोजित ग्रथवा पूवाग्रहग्रसित 'ग्रापचारिकता पूर्ति' मात्र का समायाजन मात्र नही ह ?

श्री कृष्णचन्द्र पत उतौर केन्द्रीय शिक्षामत्री ता शिक्षानीतिया के सही हाने की ग्रपेक्षा को इसलिए गौण करार द दते हैं कि उन्ह हवा मे ही सही 'समपण ग्रौर प्रतिवद्धता की भावना ग्रवश्य दिखाई देनी चाहिए। सोचन की बात है कि बिना ग्रार्थिक–सामाजिक समानता का प्रावधान किए समपण ग्रौर प्रतिबद्धता की भावना कहा स पदा हो जायगी। ऊपर के तवके म भयकर भ्रष्टाचार की ग्राग हो ता नीचे के तबके म समपण ग्रौर प्रतिबद्धता की भावना कौनसे इजक्शन से पदा की जा सकती ह ?

दस्तावज म भी दोहराया गया ह कि–'सविधान म समाजवाद, धम–निरपेक्षता ग्रौर लाकतत्र के लिए दश की प्रतिबद्धता को भी रेखाकित किया गया ह।' जी हा लेकिन इस दस्तावज म काश 'समाजवाद' के लिए प्रतिबद्धता होती, 'धमनिरपक्षता के लिए प्रतिबद्धता होती ग्रौर 'लोकतत्र के प्रति प्रति–बद्धता होती ता यह दस्तावज विगत ग्रसफलताग्रो का विलाप मात्र नही रहता वह वास्तव म शिक्षा नीति का क्रातिकारी प्रारूप हाता ग्रौर उसके प्रति समर्पण

और प्रतिबद्धता की भावना पदा न हो—ऐसा हो ही नही सकता था । इसक लिए दस्तावेज के पहले अध्याय—'शिक्षा, समाज और विकास' म साफतौर पर यह बताना लाजिमी था कि शिक्षा म वर्गीय असमानता को नष्ट करने के लिए समाज म उत्पादन सबधो की असमानता को नष्ट करना प्राथमिक आवश्यकता है अर्थात समाजवाद लान का प्राथमिकता देकर ही समाजवादी समाज की समान अवसरवाली शिक्षा की नीति को साकार किया जा सकता है । तब इस दस्तावज म ऊपर लिख दोनो क्रातिकारी सुभावो को रेखाकित करके उनका उल्लख करना पडता ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निमाण म 'आर्थिक बाधाओ' का उल्लख करत हुए भी दस्तावेज म एकदम सही कहा गया ह—आर्थिक बाधाए उत्पादन सबधो की प्राकृति, ग्रामीण शहरी असमानताओ और आय के विषम वितरण के कारण होती है' और 'आमदनी म असमानता तथा अनेक लोगो के गरीबी रखा के नीचे रहत हुए भी यह आशा करना कि समाज स्कूलो के स्तर को उठा सक हकीकत से मुह फेरन के समान ह ।' लेकिन उत्पादन सबधो की विषमता का उन्मूलन करन को शिक्षानीति के क्रातिकारी हो सकन की पूर्वापेक्षा क रूप म रेखाकित कहा किया गया ? पता नही क्या इस केन्द्र बिन्दु को भूलभलया म डाल दिया गया ह । इस केन्द्रबिन्दु स जानबूझ कर भटकाया जा रहा लगता ह जो एक अपराध ही कहा जा सकता ह ।

शिक्षा नीति के अन्तिम रूप को निर्धारित करन म इस केन्द्रीय आधारबिन्दु को अवश्य प्राथमिकता दी जानी चाहिए । क्या नौकरशाही और बुद्धिजीवी व्यवस्था के छावनीवादी बूर्जुवा विचारको को समूची व्यवस्था की बाधा' उपस्थित करन से पहले अन्तिम धक्का नही दिया जायगा ?

यह दस्तावज अपने अनुच्छेद 4 135 म एक ओर कहता ह कि— प्रजातात्रिक प्रक्रिया म भाग लन के लिए भविष्य क नागरिको को तयार करन के उद्देश्य से राजनतिक शिक्षा आवश्यक है ।' और इसी वाक्य म माग करता है कि शिक्षा क अराजनीतिकरण की । यह एक प्रकार की आत्मवचना ह ।

और सबस अधिक हल्का लिया गया ह भारत क साम्राज्यवाद विरोधी अतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण को । इस विषय म दस्तावेज तयार करनवालो का अपना प्रक्षेपण इस उक्ति म झलकता है । एक ओर कहा जा रहा ह कि 'हमन सभी

दशा के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखे है, और इसी वाक्य में कहा गया है कि और विश्व की किसी भी शक्ति के साथ संबंध नहीं जोड़ा है। यहां पूछा जा सकता है कि क्या भारत और सोवियत संघ में 'मैत्री-संधि' नहीं हुई अथवा अब उसे तोड़ दिया गया है ? क्या कई विषयों में सोवियत संघ ने भारत के पक्ष में 'वीटो' का प्रयोग नहीं किया है ? क्या बंगला देश की घटना से भारत-सोवियत मैत्री संधि का कोई संबंध नहीं है ? फिर विश्वशांति के पक्ष में रंगभेद नीति के खिलाफ गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के विकास के लिए और विकासमान दशों के लिए नई आत्मनिर्भरता की अर्थव्यवस्था के लिए भारत की विदेशनीति प्रतिबद्ध नहीं है ? क्या नेहरू, इंदिरा गांधी और अब राजीव गांधी इन मुद्दों के लिए विश्वमंच पर साम्राज्यवादी हरकतों के खिलाफ संघर्ष नहीं करते रहे अथवा कर रहे है-जिहाद नहीं बोल रहे ? क्या नौकरशाही अपने शिक्षानीति दस्तावेज में भी अपनी धूर्तता का परिचय देने से बाज नहीं आयी ?

इस दस्तावेज में प्राइवेट संस्थाओं के द्वारा किए जाने वाले शोषण का कच्चा चिट्ठा नहीं है और न ही उनके राष्ट्रीयकरण की बात का ही कहीं उल्लेख किया गया है इसमें यह भी नहीं है कि शिक्षा के क्षेत्र में शोध के नाम पर किन साम्राज्यवादी दलाल इस देश की एकता को तोड़ने की साजिशें रच रहे हैं, इसमें यह भी अंकित नहीं है कि किस तरह आई ए एस वर्ग के लोग प्रौढ़ शिक्षा की आड़ में साम्राज्यवादी देशों से पैसा लेकर उनकी दलाली कर रहे हैं, इसमें यह भी नहीं कहा गया है कि आंचलिक प्रान्तीय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं के संबंध में स्पष्टतया शिक्षा की क्या नीति हो, इसमें यह भी नहीं दर्शाया गया है कि शिक्षा का जनवादीकरण कैसे हो, इसमें शिक्षा की अन्तर्वस्तु के मानवीकरण की समस्या पर भी घोर उपेक्षा दिखाई गई है और अश्लील साहित्य की देशी-विदेशी एजेंसियों के विषय में भी अधिक दिलचस्पी नहीं दिखाई गई है।

प्रस्तावित शिक्षानीति के विश्लेषण के प्रस्तुतीकरण पर गौर किया जाय तो लगता है कि सबको शिक्षा-संबंधी काम को तिलांजलि देने निजी स्कूलों की संख्या में वृद्धि करने अध्यापकों के महत्व पर कुठाराघात करने, उच्च शिक्षा में स्तर सुधार की आड़ में प्रवेश पर पाबन्दी लगाने मॉडल स्कूलों के रूप में पब्लिक स्कूलों के विकास करने, निरक्षरता उन्मूलन के लिए स्वयं-सेवी संस्थाओं को सहायता करने, रोजगार के लिए शिक्षा की महत्ता को अवमूल्यन करने, निज

शिक्षण-संस्थाओं का विस्तार करने, 'खुले विश्वविद्यालय' की स्थापना करने और जनसाधारण में शिक्षा के प्रति निरुत्साह बनाए रखने और विशिष्ट वर्ग को शिक्षा के प्रति अधिक उत्साहित करने आदि की दिशा में कुछ परिवर्तन किए जाने की योजना पहले से ही बनायी जा चुकी है अब उस पर दूसरों से मुहर भर लगायी जा रही है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि दस्तावेज के प्रस्तावक अपनी सीमाओं को अच्छी तरह जानते हैं कि इस वर्तमान व्यवस्था में क्या कुछ किया जा सकता है और क्या नहीं किया जा सकता है। उन्होंने बहस के लिए इस दस्तावेज को प्रस्तावित करके नीति निर्धारण का उत्तरदायित्व दूसरों के कंधों पर डाल दिया है ताकि आज से 15 साल बाद अर्थात इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करने पर यही अधिकारी तंत्र क्रियान्विति की असफलताओं को लक्ष्य बनाकर हम लोगों को अपनी आलोचनात्मक व्यंजना का शिकार बनाए और फिर से 'नई शिक्षा नीति पर बहस करने' को इसी तरह का दस्तावेज लेकर पुन उपस्थित हो।

भारत सरकार के शिक्षामंत्रालय की ओर से इस शैक्षिक नीति प्रस्तावना को देश की विशाल जनता के सामने प्रस्तुत करनेवाले कम से कम इतना तो स्पष्ट कर दें कि शिक्षा आखिर किसकी संपदा होगी उसको प्राप्त करने का अधिकार किसको होगा-एक प्रतिशत अभिजात्य वर्ग को अथवा करोड़ो गरीब भारतीय लोगों को। इतिहास का यह कठोर सत्य है कि शिक्षा जनसाधारण की संपत्ति ही होगी जिसे यह चतुराई से लिखा हुआ दस्तावेज अब भी सौंपने से कतरा रहा है। आज भी शिक्षानीति के प्रस्तावित विकल्प गरीबों को निरक्षर, अंधविश्वासी और अभावग्रस्त रखने की चालाकी चल रहे हैं तथा अमीरों को साक्षर ही नहीं अपितु शिक्षित, विज्ञान और तकनीकी के स्वामी और हर प्रकार से वैभवशाली बनाने की योजना बना रहे हैं। ये कौन हैं जो आकर्षक शब्द मरीचिका में शिक्षा की वस्तुमूलकता, उसकी गतिशीलता उसकी द्वंद्वात्मकता, उसकी जटिलता और उसकी विविधता में समरूपता को भटकाने की स्थिति में डाल रहे हैं?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति को तय करने के लिए कोठारी आयोग की रिपोर्ट और सन 1968 की शिक्षानीति के प्रारूप को आधार बनाया जाय, नए बाजार भावों को ध्यान में रखकर आर्थिक आंकड़ों को संशोधित किया जाय और तद-

नुसार वित्तीय ससाधनो का प्रावधान किया जाय। सन् 1968 के बाद से पैदा हुई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों के ह्रासोन्मुख होने से रोकने के लिए ही नहीं अपितु उन्हें ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए भी शिक्षा में वस्तुगत सुधार किया जाय। हमारे पास राष्ट्रीय शिक्षानीति निर्धारित करने के लिए पर्याप्त सामग्री मौजूद है कि जिसके आधार पर प्राथमिकताओं को आसानी से तय किया जा सकता है। आवश्यकता केवल प्रतिगामी शक्तियों को दृढ़ता से दबाकर नीति को लागू करने की है।

(1) शिक्षा में आमूल परिवर्तन के लिए ग्रामीण क्षेत्र में सारी कृषिभूमि को जबरदस्ती भूमिहीनों में बांटा जाय, जमींदार वर्ग को एकदम समाप्त किया जाय और शहरी क्षेत्र में भारत के 22 एकाधिकारवादी परिवारों के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाय जिससे हमारे विकास की दिशा समाजवादोन्मुख हो और समाज में असमानता की बड़ी दीवार टूट जाय, जिससे शिक्षा में अवसरों और सुविधाओं की भयंकर असमानता काफी हद तक मिट सके। इस आधार पर कोई विकल्प नहीं हो सकता, इसके लिए कोई हीलाहवाला नहीं हो सकता तथा इसके लिए किसी भी विरोध को सहन नहीं किया जा सकता।

(2) एकाधिकार पूंजीपतियों के इन 22 परिवारों के प्रबंध में चलने वाली शिक्षा संस्थाओं का तत्काल राष्ट्रीयकरण किया जाय ताकि उनसे निकलने वाली प्रतिभाओं का उपयोग अनिवार्यतः राष्ट्रीय संपदा को बढ़ाने के लिए किया जा सके।

(3) राष्ट्रीय एकता, अखंडता, देशभक्ति, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहअस्तित्व और विश्वशांति और गुटनिरपेक्ष आंदोलन और भारत की साम्राज्यवाद विरोधी विदेश नीति के अंतर्गत रंगभेद नीति रहित व्यवस्थाओं की स्थापना हो, नवउपनिवेशवाद का उन्मूलन हो और नई अर्थव्यवस्था कायम हो-इन चेतनाओं तथा भारतीय संविधान में रेखांकित समाजवाद, लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्ष आदर्शों को शिक्षानीति की आधारशिला, अंतश्चेतना और अन्तरात्मा बनाया जाय-न केवल शब्दों में, न केवल पुस्तकीय रचनाओं में और न केवल नेताई वक्तव्यों और भाषणों में बल्कि शिक्षा और समाज के हर क्षेत्र में इतना अत्यधिक प्रचार प्रसार हो कि देश में उसकी गूंज के अलावा और कोई स्वर ही न सुनाई दे, इसके अलावा और कोई दृश्य ही दिखाई न दे।

(4) राष्ट्रीय स्तर पर एक समान पाठ्यक्रम हो।

(5) त्रिभाषा फार्मूला लागू हो।

(6) नि:शुल्क अपर प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण हो।

(7) शिक्षकों को समान और पर्याप्त सुविधाएं दी जाय।

(8) प्रतिभाओं की पहचान और उनका सदुपयोग हो।

(9) कार्यानुभव और शिक्षा को उत्पादक श्रम से जोड़ा जाय।

(10) विचार और अनुसंधान का विस्तार हो।

(11) रुचि और उद्योग की शिक्षा हो।

(12) पाठ्यपुस्तकों का व्यापक प्रकाशन हो।

(13) परीक्षा सुधार हो।

(14) 10+2 की शिक्षा प्रणाली सब जगह लागू की जाय।

(15) अंशकालीन शिक्षा और पत्राचार पाठ्यक्रम लागू हो।

(16) साक्षरता प्रसार और प्रौढ़ शिक्षा तथा अनवरत शिक्षा का प्रबंध हो।

(17) खेलकूद की शिक्षा और स्वास्थ्य शिक्षा लागू हो।

(18) शिक्षा को बहुतकनीकीकरण के साथ जोड़ दिया जाय।

ये परिवर्तन वांछित हैं किन्तु आसानी से नहीं होंगे, हर कदम पर, हर तरह से हर स्तर पर और हर सतर्कता लिए हमें संघर्ष करना पड़ेगा संघर्ष की रणनीति तैयार करनी पड़ेगी। इसके लिए सबसे पहले आवश्यक है कि नीति निर्धारण का प्रारूप बनाने के काम में आमतौर पर किसी भारतीय प्रशासनिक सेवा के व्यक्ति को शरीक न किया जाय क्योंकि वे समाजवाद, लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता तथा विशेषकर भारत की साम्राज्यवाद-विरोधी विदेश नीति के प्रति न तो समर्पण की भावना ही रखते हैं और न ही उनमें इन मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता ही है। वे अगर दस्तावेज बनाए तो भी खूबसूरत लफ्फाजी भरा किन्तु भटकानेवाला होगा और उसमें वे असफलताओं का दायित्व राजनेताओं,

अभिजात्य वर्ग और शिक्षकों पर डालकर बड़ी खूबी के साथ स्वयं की बदनीयति का बचाव कर लेंगे। हमें शिक्षा नीति के उपयुक्त 18 सूत्री रचनात्मक कार्यक्रम की सफलता के लिए सामंती तबके अर्थात जमींदारों और सामंतयुगीन संस्कारों तथा आत्मविश्वासके विरुद्ध अनवरत और अथक संघर्ष करना होगा, एकाधिकार, पूंजीपतियों और उनके दलाल बुद्धिविलासियों के विरुद्ध अनवरत और अथक संघर्ष करना होगा, हम किसी भी प्रकार की सामाजिक अनुशासनहीनता जिसमें कर चोरी से लेकर काम चोरी तक और अश्लील साहित्य की बिक्री से लेकर वधू तोडन की अनैतिकताएं तक शामिल हैं—के विरुद्ध हर स्तर पर अनवरत और अथक संघर्ष करना होगा, और हमें सामाजिक शैक्षिक मूल्यों के ह्रास को रोकने के साथ साथ उनका सार्वजनीकरण करके, तथा सार्वजनीकरण का मानवीकरण करने के लिए हर स्तर पर अनवरत और अथक संघर्ष करना होगा। क्योंकि इतनी सारी जटिल विकृतियों से की गई रुग्ण शिक्षा को निर्जीव नीति दस्तावेजों से स्वस्थ नहीं किया जा सकता और न ही शिक्षा और शिक्षक को गरिमामय स्वरूप दिया जा सकता है।

श्रमशील और शोषणरहित समाजवादी महान भारत और उसकी आभामयी शिक्षा से इक्कीसवीं सदी अपने इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय लिखे—इसके लिए सिवा संघर्ष के और कोई चारा नहीं है।

सन् 1985 ई

क्या बात है कि इनका कहीं विज्ञापन नहीं है, बहुत से इनके नाम स ही परिचित नहीं है, क्या बात है कि इनको विज्ञापन नहीं मिलते, इनके पीछे न कोई सरकार है और न कोई सेठिया। सठियो के लेखक भी इनम नहीं के बराबर छपते हैं-कबीरा और फकीरा ही प्राय छपते है। निराला यहीं दिखता है, महा देवी भाग जाती है। क्या बात है कि इनके पास खूबसूरत तस्वीरें नहीं ह, जासूसी थीम नहीं है, पीत पत्रकारिता नहीं, राशिफल नहीं और फिल्मी पोज नहीं-धत्त चितकों के, पाखंडी नेताओं के और पता नहीं किन-किन के। इसलिए तो इनका मनचले उद्देश्यहीन नौजवान पाठक नहीं पढते, इ ह जड भारती नहीं पढत इ हे स्वार्थी और मक्कार पाठक नहीं पढते। पाठक संख्या भी इस मायने म लघु।

किन्तु क्या बात है कि "राइनिश जीटुंग" कुछ दिन निकल कर और शोले बिखेर कर परिस्थितिवश दबोच लिया जाता है तो आगे की आग लगाने वाला "इस्क्रा" सामने आ जाता है। "नया साहित्य' कहीं रुक गया तो "नई चेतना" मैदान में आ गई। और इसी सिलसिले मे एक पत्रिका कुछ दिन जूझकर धरा शायी हुई नहीं कि दूसरी लघु पत्रिका ने आकर उसकी आग को प्रज्वलित रखा। इतिहास सिद्ध कर चुका है कि इ ही 'अनियतकालीन' पत्रिकाओं ने क्रांति की मशाला को जलाए रखा है-'कार्ल्लेक्स या 'सरकार' या पू जीवादी व्यवस्था मे पलने वाली अकादमियों की अप्सरा पत्रिकाओं न शोषण और जडता के कदमो म अपने आपको समर्पित कर रखा है, अपने आपको यथास्थिति का हथियार बना कर लम्बी उम्र गुजार दी है और दौलत कमाने की मशीन का काम कर रही है-उनम कबीरा फकीरा को जगह नहीं।

इन पत्रिकाओं के सम्पादक कहिए, प्रकाशक कहिए, मालिक कहिए-उ होने इनके लिए लेखन भी किया है, सपादन भी किया है, छद्म नाम से लिखकर भी इ ह भरा है, इनका प्रूफ भी देखा है रपर चिपकाए हैं, पते लिखे हैं और डाकघर तक ले गए हैं। एक दो साल म गहने-बरतन बेच दिए हैं और इधर पत्रिकाजी भूखो मार कर और स्वय भूखो मरती हुई पलीता टालकर विदा हो गई। क्या यह लघु पत्रिकाओं का ही लाघव है कि उनमें साहित्य का स्वरूप निखरा है, समाज का द्वन्द्व तीव्र हुआ है, उसका अतय विकसित हुआ है और उ होने ही ससार के समाजो को ऊर्जस्वित बनाए रखा है ?

दिसम्बर-1983

उसे झूठे आश्वासन देकर निकाल दिया गया। प्रदर्शन किये, ज्ञापन दिये, भूख हड़ताल की झांसे मिले मजबूर होकर गांधीजी का असहयोग आंदोलन करना पड़ा हड़ताल होगी, जेल भरो, नगर, बंद, प्रांत बन्द, रास्ता रोको तक भी करना पड़ सकता है। संगठना के लिये ये साधन अपनाने की विवशता प्रशासन पैदा करता है।

5 दुनिया भर के सारे शिक्षक संघों के वर्तमान क्रियाकलापों को समग्र दृष्टि से देखने पर न केवल संतुष्टि प्राप्त होती है। बल्कि प्रसन्नता एवं गौरव भी प्राप्त होता है। शिक्षक संगठन युद्ध के विरुद्ध विश्व शांति, हर प्रकार के शोषण के विरुद्ध शोषणहीन व्यवस्था, लोकतन्त्र की रक्षा व विकास, निरक्षरता उन्मूलन महिला मुक्ति आदि मानवीय मूल्यों के लिए प्रयत्नशील है।

हां, इसका एक और पहलू भी है। सत्तापक्ष और अफसरशाही ने जहां जेबी संगठन खड़े किए है, वहां अराजकता का प्रवेश भी हो गया है।

6 द्विवर्गीय समाज में बिखराव वर्ग-भेद के आधार पर होता है। अर्थ व्यवस्था के आधार पर पूरा विश्व दो वर्गों में बंटा है-दो दर्शन, दो सत्ताएं, दो संस्कृतियां। शिक्षक संगठनों का इस आधार पर विभाजित होना ऐतिहासिक आवश्यकता है। यह बिखराव नहीं।

सन् 1952 में शिक्षकों ने एक ही "राजस्थान शिक्षक संघ" बनाया। इसमें से सत्तापक्ष के एक घटक ने साम्प्रदायिक घटक के साथ मिलकर पहली बार इस तोड़ा-दो बने। फिर तोड़ा और तोड़ा तीन और चार बन गए। फिर अपने ही प्राथमिक, माध्यमिक व्याख्याता, विश्वविद्यालयी वर्गवार टुकड़ों में बंटे। इस प्रकार बिखराव हुआ। सरकार निष्पक्ष, गुप्त मतदान करवाकर एक ही संगठन को मान्यता दे सकती है-बिखराव समाप्त हो जाएगा। शिक्षक संघ अपनी आचारसंहिता छाप कर उसका पालन करेगा तो नेतृत्व गम्भीर तथा ईमानदार होगा। ऐसे धर्मनिरपेक्ष, वैज्ञानिक, लोकतान्त्रिक शिक्षक संघ को सरकार 70% अनुदान देगी तो नक्शा बदल जाएगा।

सितम्बर-1983

शिक्षक की स्वयं की आरोपित जवाबदेही

नई शिक्षा नीति के निर्धारकों ने शिक्षक के उत्तरदायित्वपूर्ण होने में अपनी आशंका को ही अभिव्यक्त किया है और एक आचार संहिता की आवश्यकता का महसूस करके शिक्षक को गरजिम्मेवारियों से दूर करने का संकेत भी दे दिया है। मोटे तौर पर 'शिक्षक' प्रकरण को मैं एक खोखली झांसेबाजी ही कह सकता हूँ— यकीन न हो तो इस नीति के भाग 9 2 को एक बार फिर गौर से पढ़कर देख लीजिये।

मानलो कि शिक्षक अपनी जिम्मेवारी को नहीं निभाता, इसलिए उसकी जवाबदेही की पृष्ठभूमि में आचारसंहिता का निर्धारण आज की एक प्राथमिक अनिवार्यता बन चुका है। ठीक है, किन्तु सवाल उठता है कि आजादी के बाद इन 39 सालों के और संविधान लागू करने के 35 साल बीत जाने पर भी संविधान में अंकित समाजवाद' के रास्ते में हम कदम क्यों न उठा पाए? कौन जवाबदेह है इसके लिए और क्या कोई इसके लिए भी आचार संहिता बनाने की आवश्यकता है? यदि 'समाजवाद लाया जाता तो आज धनी-गरीब का इतना बड़ा भेदभाव कायम न होता, आज 50 करोड़ निरक्षर इंसान जीवन की निम्नतम सीमारेखा से भी नीचे जीने को विवश न हुए होते और शिक्षा में 'समानता' को लेकर थोथे गाल नहीं बजाए जाते अथवा समान अवसर' के फटे ढोल नहीं पीटे जाते।

शिक्षक की जवाबदेही का सवाल तय करना हो तो शिक्षक की जड़ को पहचानना होगा। आखिर भारत का शिक्षक कहीं आसमान से तो टपका नहीं है। वह उसी समाज-व्यवस्था में पैदा हुआ, पाला पोसा गया, शिक्षित हुआ और शिक्षक बना—जिस समाज व्यवस्था को समाज निर्माताओं के पिरामिड (?) ने बनाया है। यह वह समाज व्यवस्था है जिसमें आर्थिक असमानता है भ्रष्टाचार है, अराजकता है गुंडागर्दी है, सत्ता की चापलूसी है। यह व्यवस्था क्या शिक्षक ने दी है? शिक्षक की जवाबदेही का प्रश्न ही बेकार है। ज्योंही वह शिक्षक बनता है सेवा नियमों दण्डविधानों और व्यवहारगत सामाजिक परिस्थितियों के दायरे में उसे काम करना पड़ता है, सेवा-शर्तों के अधीन वह जवाबदेह तो होना ही है।

साफ और दो टूक बात यह है कि क्रांतिकारी सिद्धांत को अपनाए बिना क्रांतिकारी रूपांतरण नहीं हो सकता और क्रांतिकारी संक्रमण को टालने की जब कोशिश की जाती है तो प्रत्येक 'नीति' नितांत खोखली और अविश्वसनीय हो जाती है। उस 'नीति' के किसी सूत्र के कामयाब होने का विश्वास स्वयं नीति-निर्धारकों में ही नहीं होता। जब कभी रूपांतरणकारी दर्शन के आधार पर सही कदम उठेगा विश्वसनीय कदम, जिसे उठाने वाले सत्ता के धारक नहीं बल्कि उस संरचना के लिए अपना खून बहाने वाले होंगे-अपना जीवन समर्पित करने वाले होंगे-उस दिन यह शिक्षक औपचारिक अथवा अनौपचारिक शिक्षा के हर बिंदु पर, उसके हर पहलू पर जान की बाजी लगा देगा। तब वह यकीनन बिना किसी 'पुरस्कार' और 'संरक्षण' की अपेक्षा पाले निरक्षरता उन्मूलन, छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के निर्माण, सांस्कृतिक जागरण, शैक्षिक नवाचरण और भारत की हर प्रकार से स्वस्थ और सुंदर नई पीढ़ी के निर्माण के लिए अपनी महत्त्वपूर्ण जवाबदेही को स्वयमेव स्वयं आरोपित कर लेगा और वह अपने समूह में यदि कोई विकृत तत्त्व होंगे तो सामूहिक और संगठित निर्णय लेकर उन्हें अपने समाज से स्वयं बहिष्कृत कर देगा।

अप्रैल-1987

9752

गणित में महिलाओं की समभिक्षमता

जीव-मूलकता को प्रमुख आधार मानकर किए गए प्रयोग न केवल भ्रामक ही होते हैं, अपितु खतरनाक भी। इसकी पृष्ठभूमि में होती है आनुवंशिकता की प्राथमिकता लैंगिक विशिष्टताएं (खासतौर पर पितृ सत्तात्मकता का मिथ्याभिमान), परम्परावादिता, नस्लवाद आदि। प्रो. पेत्रोव्स्की के अनुसार—"मनोविज्ञानवेत्ताओं द्वारा एकत्र कुछ तथ्य शिक्षा विज्ञानियों को भ्रम में भी डाल सकते हैं।" इसी प्रकार का भ्रम पैदा किया है संयुक्त राज्य अमेरिका के जान हापकिंस विश्वविद्यालय के बेनबाव व स्टेनले के शोध निष्कर्ष-'गणित में पुरुष महिलाओं से अच्छे'* शीर्षक ने। बेनबोव और स्टेनले की जांच की बुनियाद ही लैंगिक प्रतिद्वंद्विता है, तो निष्कर्ष, निश्चित है कि प्रतिगामी शिक्षाशास्त्रीय होंगे। यदि शोध का आधार व्यष्टि या समष्टि को आर्थिक-सामाजिक सांस्कृतिक ऐतिहासिक विकास के परिप्रेक्ष्य में देखना हो तो इस प्रकार के घातक परिणाम नहीं प्राप्त हो सकते।

*शिविरा के फरवरी 83 अंक के 'चतुर्दिक' स्तम्भ में प्रकाशित अंक का शीर्षक।

'स्कॉलेस्टिक एप्टीट्यूड परीक्षण' (विद्यालयी अभिक्षमता परीक्षा) अथवा आई क्यू अथवा 'विशिष्टता मापकता' जैसी पिटी पिटी जांच प्रणालियां अब से चालीस साल पहले ही ठुकरा दी गई हैं, किन्तु आश्चर्य तो यह है कि हम उन्हीं भ्रमजालों में अब भी फंस जाया करते हैं। किजिवस, गणित और शिक्षा मनोविज्ञान की विख्यात प्रतिभा नीना तलिजिना ने 'द साइकोलाजी ऑफ लर्निंग' में अपने शोध प्रयोगों द्वारा यथास्थितिवादी जांचों की बखिया उधेड़ कर रख दी। नीना तेलिजिना, वी एन शाटम्काया (साइंटिफिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट की भूतपूर्व डाइरेक्टर), नचाम्पास्काया, ड्रागुनोवा, प्रसिद्ध भौतिक विदुषी शास्कोलस्काया, क्लम्कोवा आदि अनेकों महिलाओं और मार्कारेंको, गुमोम्लोन्स्की, विगोत्स्की, गाल्पेरिन, लिएन्त्येव, देन्नोवस्की आदि के शोध कार्यों ने पुरुष और महिलाओं की अभिक्षमताओं में किसी भी प्रकार की जन्मजात हीनता नहीं पाई। उनकी दृष्टि में ऐसी कोशिश कुत्सित अभियान मात्र है। यह ध्रुव सत्य है कि महिलाओं या लड़कियों में पुरुषों से किसी भी विषय को ग्रहण करने की क्षमता लैंगिक आधार पर कम नहीं होती—नहीं हो सकती। पता नहीं क्यों रावेन्ना हेल्सन को महिला गणितज्ञों के नाम उपलब्ध नहीं हुए जबकि रूस, जर्मनी, फ्रांस, हंगरी, इंग्लैंड, अमरीका देशों में कई सैकड़ा गणितज्ञ महिलाएं मिल सकती हैं। विश्व इतिहास की बात करते समय सदियों से चले आ रहे नारी दमन को दृष्टि से ओझल नहीं किया जाना चाहिए।

समता के स्तर ज्यों ज्यों महिलाएं ऊपर उठती जायेंगी—उनकी दबी हुई क्षमताएं उभर कर अपने आप ऐसी शोधों का छिछलापन साबित कर देंगी जिनके तहत 'गणित में पुरुष महिलाओं से अच्छे' सिद्ध करने की हिमाकत की जाती है।

अप्रैल–1983

कुए के मडक समझते है—इस कुए से बाहर कुछ भी नही—सारी दुनिया इतनी ही है। जातिवाद के पुजारी, साम्प्रदायिकता के गुरु-पडे-गुण्डे, क्षेत्रीयता, प्रांतीयता म थ राष्ट्रवादिता की जजीरो मे जक्डे हुए बदी मानते हैं—इस कौम, इस स्थान और इस देशीय चहार दीवारी के बाहर कुछ भी नही, कुछ भी 'अच्छा' नही बस सारी अच्छाइया इसी घेरे म ब द हैं। दुनिया इतनी ही है।

सकीणता की पराकाष्ठा मूखता की चरमसीमा, अज्ञान की भयकर अमावस्या!!

जातिवादी और साम्प्रदायिक तत्व

* इसानियत के दुश्मन टुच्चे धनिको के टुकडो पर पलते हैं।

* मस्तिष्कहीन पशु होत है जो गुण्डपन को अपना जीवनाधार बनाकर जीत है।

* विचार शू य लोगो (भेडो) को हाकत हैं।

* सदा विश्वासघाती, कृतघ्न और अनतिक आचरण वाले स्वार्थी प्राणी होते है।

* चाहे जितनी डिग्रिया और चाह जितना ऊचा पद हासिल करलें, आत्म तुष्ट कूपमडूक होत हैं।

* मानव विकास को अपने कलकित प्रयासो से रोकने वाले होते हैं।

* मानव इतिहास को कलकित करने म सदा सचेष्ट रहने वाले होत हैं।

क्षेत्रीयता—प्रांतीयता—अ धराष्ट्रीयता के पुजारी

* सकीणता और हीनता से ग्रस्त होत हैं।

* चाह जितनी डिग्रियाँ और चाह जितना ऊचा पद हासिल करें अशिक्षित और उज्जड ही रहते हैं।

* अ तत मानव द्रोही होते है।
* अवसरवादी और स्वार्थी होते हैं।
* गुण्डागर्दी तक कर सकत हैं, विश्वासघात भी कर सकते हैं।

कुचल दो, कुचल दो इन सापो को, इन बिच्छुओ को। तोड दो, तोड दो इनके फन और काटे। छीन लो, छीन लो इनकी आजादी इनकी स्वच्छ दता।

प्रजात त्र ?

प्रजात त्र क्या गुण्डो को, बदमाशो को, पाजियो को खुला छोडने का नाम

है? यदि यही तुम्हारे प्रजातन्त्र की, गणतन्त्र की परिभाषा है तो इस ना समझी को दूर करो। ये गुण्डे समाज के कलक हैं–इन्हें मिटा दो इनका नामोनिशान मिटादो।

लेकिन ऐसे लोग भी जातिवादी, साम्प्रदायिक हैं जो आज ऊपर से कांग्रेसी किन्तु भीतर से सघी, सभाई या लीगी और अकाली हैं। ऊपर से 'समाजवादी' और भीतर से जातिवाद और सम्प्रदायवाद के पोषक है। ऐसे नेता भी हैं, अधिकारी भी और कमचारी भी जो जातिवाद और सम्प्रदायवाद की शक्तियां हैं। इनका क्या इलाज है ?

समस्त जातिवादी और सम्प्रदायवादी पार्टिया पर सख्ती के साथ प्रतिबन्ध लगादो। कोई सिर उठाए उसका सिर कुचल डालो। इसके बाद ये छिप हुए नेता, अधिकारी और कमचारी अपने आप मर जाएँगे। इनकी शक्ति टूट जायगी। इनके कारनामे खतम हो जाएग और फिर भी यदि कोई तत्व अपनी मनमानी करे तो उस बाहर फेंक कर समाज के सामने उसके षडयन्त्रा का रहस्य खोल दो।

गणेश शकर विद्यार्थी का बलिदान व्यथ क्या सिद्ध हो ? महात्मा गाधी की कुर्बानी बेकार क्या साबित हो ? असख्य दूसरे बलिदानो का मूल्य क्या कुछ भी नही ? अब भी क्या सोचना बाकी है ? अब भी नही ? अब भी क्या सोचना बाकी है ? अब भी क्या प्रजातन्त्र की दुहाई देकर मानव शत्रुओ को जीवित रखना अक्लमदी है ?

जातिवाद और सम्प्रदायवाद को कुचलने के लिए प्रजातन्त्र की दकियानूसी परिभाषा को ठुकराना पडे तो ठुकरादो। प्रजातान्त्रिक समाजवाद से काम नही चलेगा, अब तुम्ह समाजवादी अधिनायकत्व से काम लेना होगा।

कितनी शम की बात है कि आस्तीन मे साप पल रह हैं कितने दुख का विषय है कि सघे अगूर खात हैं और इ सान पिस रहे है, गुण्डागर्दी के शिकार हो रहे हैं। अब यह असह्य है। इनको मिटाना ही होगा–इनको सदा के लिए खतम करना ही हागा।

देखो इनके मुख म 'राम राम' की आवाज है और इनकी बगल म इसानियत की पीठ म घोपने के उद्देश्य से छिपाई हुई विषली छुरी। इसानियत को भयमुक्त करने के लिए इनके दात उखाडने ही होंगे। इनके दात उखाड डालो।

सरकार प्रण करे कि वह इस 'वसुधैव कुटुम्बकम' वाले देश में से इन रावणों का सफाया करके ही दम लेगी। ये दुःशासन किसी द्रौपदी का चीर हरण फिर से न कर सकें—इसके लिए इन खूनी पंजों को तोड़ना ही होगा।

जातिवाद और सम्प्रदायवाद पर काबू पाया तो समझो क्षेत्रीयता, प्रान्तीयता और अन्ध राष्ट्रीयता के पर उखाड़ने के लिए पृष्ठभूमि तैयार हो गई। ये संकीर्णताएं भी तब शक्तिहीन प्रवृत्तियां दिखाई देंगी और इनको हटाने में अपेक्षाकृत कम प्रयासों की आवश्यकता होगी।

सारे कवि और लेखक अपनी शक्ति जातिवाद और साम्प्रदायिकता के विरुद्ध लगाएं। सारे वक्ता अपने भाषणों में जातिवाद और साम्प्रदायिकता पर करारे प्रहार करें। सारे राजनैतिक दल अपनी कमेटियों में प्रस्ताव पारित करके उनको प्रसारित और प्रचारित करें।

पाठ्यक्रम में जातिवाद और सम्प्रदायवाद के विरुद्ध पढ़ने वाली रचनाएं हों। शिक्षण शालाओं में ऐसा वातावरण उत्पन्न किया जाय कि बालकों पर उदारता का सीधा प्रभाव पड़े।

घरों में अभिभावक जातिगत संस्कारों को कभी न उभरने दिया जाय और इतर जाति के लोगों से जीवित सम्पर्क किया जाय जिससे संतति रूढ़िग्रस्तता से दूर रहे। माताएं यह ख्याल रखें कि उनकी संतान किसी साम्प्रदायिक अथवा जातिवादी संस्था के लोगों के चक्कर में न पड़े।

उन समाचार पत्रों पर प्रतिबन्ध लगा दो जो जातिगत अथवा साम्प्रदायिक आधार पर चलते हैं। ऐसी अनेक एजेंसियां हैं जो साम्प्रदायिक साहित्य का सृजन करती हैं धनिकों के द्वारा ये एजेंसियां अपनी व्यवस्था सुरक्षित रखने के लिए निर्मित की गई हैं—इन पर रोक लगाई जाय क्योंकि ये मानव को विभाजित करने वाली दीवार खड़ी करती हैं।

शिक्षित लोगों का कर्तव्य है कि वे अपनी शिक्षा का उपयोग जनता का दृष्टिकोण उदार बनाने की दिशा में करें। किसी भी शिक्षित व्यक्ति के लिए इससे अधिक कलंक की और कोई बात नहीं हो सकती कि वह किसी जाति के नाम पर बनी किसी संस्था का सदस्य बने, किसी सम्प्रदाय के उद्देश्य को अपना कर बनाए गए दल या संगठन को अंगीकृत करे। इससे शिक्षा भी कलंकित होती है और उसको पा करके भी अशिक्षित की तरह संकीर्ण बना हुआ व्यक्ति भी

स्वस्थ भारत के लिए जातिवाद को दफना दो, साम्प्रदायिकता को दफना दो, क्षेत्रीयता, प्रांतीयता और अंधी राष्ट्रीयता को दफना दो। इन्हें कानूनों के जरिये मिटा दो, इन्हें बौद्धिक तर्कों से परास्त कर दो, इन्हें प्रचार के द्वारा निरस्त कर दो इन्हें सामाजिक आधार पर समाप्त कर दो, इन्हें संस्थाओं के द्वारा धकेल दो और इन्हें संगठनों की संयुक्त शक्ति से हमेशा हमेशा के लिए मार भगाओ। इन सांपों और बिच्छुओं को कुचल कर वहशियत का जनाजा उठा दो।

उठो, आगे बढ़ो—जमाने का तकाजा है, युग की मांग है और इन्सानियत का फर्ज है, इसे पूरा करो, पूरा करो। उठो, आगे बढ़ो—कर्तव्य की पुकार है, इसे सुनो और सुन कर जातिवाद और सांप्रदायिकता पर आखिरी हमला करने के लिए कमर कसकर खड़े हो जाओ—जीत तुम्हारी है।

□

वातायन खोल दो

रूढ़ियों का गुलाम इन्सान भी कोई इन्सान है चाहे वह पुरुष हो चाहे स्त्री। रूढ़ियां दिमागी गुलामी है। यदि पढ़ लिखकर भी रूढ़ियों से तुम्हारा छुटकारा नहीं हुआ तो समझ लो तुम्हारे में और पशु में कोई फर्क नहीं। दिमाग से गुलाम इन्सान समाज का घोर दुश्मन है, क्योंकि समाज जिस विकास के मार्ग पर चलना चाहता है वह उसको रोकने के अलावा और कुछ भी नहीं कर रहा है।

रूढ़ियों के गुलाम की संतान भी गुलाम ही होती है—दिमाग से गुलाम। जब कोई व्यक्ति किसी रूढ़ि को मानने वाला दिखाई दे तो समझ लो वह अपनी संतान का पक्का शत्रु है जो उसके दिमाग को मूर्ख रखने के लिए मजबूर करता है। समाज का सामान्य व्यक्ति रूढ़िवादी नहीं उदार हुआ करता है, लेकिन उसको रूढ़िवादियों की गलत सीख ही मजबूर करती है कि वह रूढ़िग्रस्त हो।

रूढ़ियां दिमाग के चक्कर जाम कर देती है। वे मजबूर करती हैं कि व्यक्ति गलत कामों को विश्वास के साथ पूरा करे। बच्चे को बुखार आया हैं तो नजर उतारने का झाड़ा ही करे, विवाह में दूल्हा तलवार लेकर ही चले, खुरदरे पत्थर को शीतला माता मानकर उसकी पूजा ही करे, अपनी ही जात बिरादरी में शादी करे दुलहिन के लिए कुछ न कुछ तो गहने बनवाए ही, लड़की के रजस्वला होने से पहले ही उसे ब्याह दिया जाय, चोटी और जनेऊ रखी ही जाय, जन्म पर फलां 2 आयोजन तो हों ही, शादी में फलां 2 रिवाज माने ही जांय

मत्यु पर फला 2 रिवाज तो पूरे होने ही चाहिए। इतने ब्राह्मण इस ग्रवसर पर जिलाए जाय, इतना दान इस ग्रवसर पर दिया जाय, इन इन देवताग्रा का पूजन इन इन ग्रवसरा पर हो, इतने दिन लडकी को पीहर रखा जाय, इन इन मौका पर उसे ससुराल रहना होगा ग्रादि रस्म कितने ही परिवारा को खा रही हैं।

मूर्खो ! ग्रथ व्यवस्था म ज्या ही क्रातिकारी परिवतन हुग्रा तुम्हारी ये रूढिया बडी ही तेजी क साथ टूट टूट कर गिर जायगी—फिर तुम क्या इनको गले स चिपकाकर ग्रपनी सतति को ग्रध कुए म धकेल रह हो।

रूढियाँ ग्रौर ग्रधविश्वास एक ही सिक्के क दो पग हैं। य व्यक्ति की बीमारिया हैं। य मानस की—चेतना की राजयक्ष्मा हैं।

रूढिया क्या हैं ? रूढ धारणाए वस्तुस्थिति स ग्राखें बद करना है। समाज चिर विकास की ग्रार ग्राग बढता है। उसकी परिस्थितिया म हमशा परिवतन होत रहते हैं। विकास समाज की ग्रनिवाय शत है—उसकी प्रकृति है। समाज म होने वाले परिवतना को न देखना देखते हुए भी उन पर न गौर करना, न उनका मूल्याकन करने की क्षमता का उपयोग करना ग्रर्थात् बदल हुए—बदलते हुए हालात को न समझना, परिवतनो की ग्रोर स ग्राखें मूद लेना रूढिवादी धारणा है।

ग्राज स एक हजार साल पहल स जो रस्मो रिवाज शुरू हुए उनको बदला हुइ वस्तुस्थिति के ग्रनुसार न बदलना दकियानूसीपन ग्रथवा रूढिवादिता है। समाज के हालात 15 20 साल म ही ग्रपना ग्रलग स्वरूप बना लत हैं किन्तु दकियानूसी लाग ग्रपने उसी पुरान ढर्रे से काम करत रहते हैं।

रिवाज सड जाते हैं, रस्मो म बदबू ग्राने लगती है, वे समाज ग्रौर व्यक्ति के परिवार के वातावरण को विषला बना देत हैं कि तु रूढिवादी उसी सडाध म घुट घुटकर जीत मरते हैं। गदी नाली के कीडा की तरह रूढिवादी गन्दगी में ही ग्रपनी उम्र को काटते जाते है। वे जीते नही-जीवन के साथ धोखा करत हैं। भला इसस भी बडी मूखता ग्रौर कोई हो सकती है।

मैं ग्रध्यापक को किसी रूढि को मानत हुए देखता हू तो नफरत स भर जाता हू। किसी डाक्टर को दकियानूसी दखता हू तो उससे घृणा करने लगता हू। किसी ग्रधिकारी ग्रथवा मन्त्री को इस दल दल मे फसा देखता हू तो उसकी मूखता पर भृकुटि चढाए बिना नही रह सकता। किसी नवयुवक को देखता हू तो मुझे उसक मानसिक बुढापे पर रोष ग्राने लगता है। हा मुझे रूढिवादियो से सख्त नफरत है, वेइतहा नफरत।

पत्थरो के सामने झुकने की जिनकी आदत है-वे भला कभी भी स्वतन्त्रता का सही अर्थ समझ सकते हैं। विपत्तियो को सहन करने मे कमजोर व्यक्ति ईश्वर परायणता की शरण लेता है तो ऐसा लगता है कि वह निरा नपुंसक ही है। पलायनवादी प्रवृत्ति को आध्यात्मिकता की आड मे छिपाने वाला निठल्ला और निकम्मा नही तो और क्या है। वैज्ञानिक प्रगति को अन्धी आखो से नही देखा जा सकता। ये अन्धी आखें धर्मांधता से मिलती है। वतमान के यथाथ को स्वप्निल दार्शनिकता पर कुर्बान करने वाले अपनी अल्पज्ञता को ही सब कुछ समझने की गलती करते है।

'हमारी संस्कृति' सबसे ऊची, हमारा दर्शन सबसे श्रेष्ठ, हमारा धर्म सबसे ऊपर, हमारे देवता सबसे बढिया, हमारा ईश्वर सबसे मोटा, हमारा अध्यात्म सबका सिर मोर! बाकी सब हमसे नीचे-हम सबसे सब बातो मे ऊचे। हमारी जाति ऊची, हमारी भाषा ऊची-हमारा ज्ञान ही सब अन्तिम ज्ञान।' ऐसी धारणाओ से बडी मूर्खता और कुछ हो नहीं सकती और ऐसी धारणाओ वाले लोगो से बढकर मानवता का शत्रु दूसरा कोई हो नही सकता। जहा कही ऐसी बातें सुनो वहा समझलो मूर्खता किसी न किसी आकृति मे छिपी बैठी है।

बीसवी सदी के उत्तरार्द्ध मे ये कौन मूर्ख हैं जो रामायण, गीता, कुरान, ग्रन्थ साहब और बाइबिल मे ही ज्ञान की इतिश्री मानने की हिमाकत करते जा रहे हैं? विज्ञान की देन का मूल्यांकन न करके अपनी ही ची पो, ची पो से चिल्लाने वाले ये कौन गर्दभ हैं जो बिना लकुट प्रहार के चुप रहने को तैयार ही नही हो रहे है।

उन स्वस्थ परम्पराओ ने मानवता का विकास किया है जो स्वय प्रतिभा सम्पन्न प्राणियो के द्वारा सशोधित, परिवर्तित और परिवर्द्धित होती रही हैं। उन्हे रूढियो की सज्ञा देने की हिम्मत किसी मे नही हो सकती? विकासमान परम्पराएं समाज का सम्बल हैं और रूढिया मरणशील संस्कृति की टूटती हुई कडिया।

तो इन रूढियो से छुटकारा कैसे हो?-एक सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न है।

अपने दिमाग को स्वतन्त्रता दो। उसे सोचने के लिए आजादी दो। उसे खुला रखो। उसके वातायन खोल दो ताकि खुली हवा नई चेतना प्रदान करे। कोई भी घटना हो व्यक्तिगत जीवन की अथवा सामाजिक जीवन की उस पर

स्वत त्रता से सोचो। जीवन का कोई भी पहलू हो उस पर आज की परिस्थितियों का प्रकाश डालो और उसे गौर से देखो। उसके सब पक्षों को अच्छी तरह सोचो और तब कौन से संशोधन कौन से परिवर्तन, कौन से परिवर्द्धन और कौन से कट करने योग्य हैं उनकी गुंजायश ढूंढो, ढूंढने की आदत डालो और तब तुम्हें समझ में आएगा कि पुराने फार्मूले नए हालात के अनुसार बदलने ही होंगे। उनको बदलो कुछ को काटो, कुछ नए जोड़ो और तब तुम एक स्वस्थ वस्तु की प्राप्ति कर सकोगे जो तुम्हारे लिए भी लाभकारी होगी और समाज के लिए भी। इसके लिए कई रिवाजों को एकदम मिटा देना होगा। कुछ को नया रूप देना होगा। कुछ काट छांट करनी होगी और तब तुम देखोगे कि तुम रूढ़ियों की जंजीरों से आजाद हो चुके हो। तुम देखोगे कि तुम पशु की स्थिति से अलग हट कर इंसानों की कतार में आ खड़े हुए हो।

अपनी संतान पर कोई चीज मत थोपो। अपने शिष्यों और मित्रों की चेतना पर हावी होने की अज्ञता मत करो। उनको तुम्हारे सुझावों पर सोचने का अवसर दो, प्रेरणा दो, जिज्ञासा दो। इससे न केवल गुमराह करने के इलजाम से बच जाओगे, बल्कि तुम्हें भी अपनी समझ को बढ़ाने का मौका मिलेगा। अपनी संतान अपने शिष्यों और मित्रों को कभी किसी धर्म विशेष, जाति विशेष, सम्प्रदाय विशेष की सम्पर्क धर्म संस्था के पीछे चलने और उसके कार्यक्रम में भाग लेने का आदेश मत दो—बल्कि उनके सामने एक ऐसा दृष्टिकोण रखो कि वह इन लकीरों का फकीर कभी न बने।

रूढ़ियों के जाल को काटते जाओ। स्वस्थ रास्तों की खोज करते जाओ। यह तभी होगा जब अपने मस्तिष्क का उपयोग करना सीख जाओगे। याद रखो तुम विकास का प्रकाश तुम्हारे स्वयं के मस्तिष्क में है। भेड़ों की चाल भेड़ें ही चलती हैं इंसान नहीं। इंसान की चाल अंधी नहीं होती वह मार्ग को पहचानती है, खोजती है नए मार्ग का निर्माण करती है।

अपने आप को धोखा मत दो। रूढ़िवादी अपने आपको अपने समाज को, अपनी दीन दुनिया को धोखा देता है और इस धोखा धड़ी पर अन्धा घमंड करता है—यही उसकी अज्ञानता है। इसी से वह अपना और दूसरों का मार्ग कटक बनता है।

युवक हो तो यौवन का सबूत दो इन सड़ी गली पुरानी रूढ़ियों के टुकड़े टुकड़े करके। प्रौढ़ हो तो समझदारी का प्रमाण प्रस्तुत करो अपने अनुभव से नई

दिशा का मार्ग ढूढकर। वृद्ध हो तो बुढापे को उदारता म ढालकर दूसरो के लिए प्रकाश पुज सिद्ध हो। गुरु हो तो चिर नवीन ज्ञान की खोज करके शिष्यो की प्रतिभा को प्रकाश में लाग्रो। मित्र हो तो समस्याग्रो के नए सुलभ सुलझाव देकर मित्र को नई प्रेरणाए दो। ब धु हो तो नई मा यताग्रो की सम्पत्ति का वितरण करके दिखाग्रो।

रूढियाँ तुम्ह नही जला न पाए तुम्ही रूढिया की ग्रत्यष्ठि कर डालो। रूढियाँ तुम्हारा गला न दबाचने पाए तुम्ही उनका गला दबोच डालो। रूढिया तुम्हारे जीवन को जजर न करने पाए तुम्ही उनके जीवन को समाप्त करदो।

रूढियो की ग्रर्थी उठने दो। रूढियो का जनाजा निकलने दो। रूढिया की चिता जलने दो, मिटने दो, मरने दो। रूढियो को दुबादो, उ ह गिरा दो, उ ह फेंक दो, उ ह काट डालो, उ ह छाट डालो।

तुम्हारी चेतना के प्रकाश से रूढिया का ग्र धकार दूर भागे–दूर भागे–दूर भागे!

बधन तोडने होंगे

विवाह !

उ ही सडी गली परम्पराग्रो के ग्रनुसार होते है विवाह ! कितना ग्राडबर होता है विवाह म, कितने पुराने रिवाजो को हूबहू माना जाता है विवाह म? जाति गोत्र के बधन ग्रब भी मनुष्य को जकडे हुए हैं। ग्रब भी माता पिताग्रो की पसद लडके लडकियो के जीवन बरबाद कर रही है। ग्रब भी मडप, घोडा, तल वार, बरात, भोज, ग्राभूषण ग्रौर दहेज की प्रथाए जीवित ही नही सवत्र प्राय विद्यमान हैं।

बिना ग्राडबर के कोट म मामूली से खच म जो काम किया जा सकता है, जिस बधन म दो व्यक्तियो को बाधा जा सकता है–उसके लिए कितना बेकार का व्यय करके जीवन को कज के हवाले कर दिया जाता है।

यहा पढे लिखे लोग भी इस मामले मे इतनी मूखता भरा दकियानूसीपन दिखाते हैं कि स्वय शिक्षा को शर्माना पडे। वे भी उ ही पुराने रिवाजो के गुलाम हैं, वे भी ग्र ध होकर उनका ग्रनुसरण करते हैं।

विवाह से पूव जिस तयारी की सबस बडी आवश्यकता होती है उसका कहीं नाम निशान ही नहीं। विवाह के प्रमुख उद्देश्यो मे से प्रथम काम का व्यवस्थित अवसर प्रदान करना होता है। इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि विवाह से पूव काम कला की शिक्षा दी जाय। काम कला की शिक्षा के अभाव म वर वधू दोनो ही काम सबधी एसी गलतिया करते हैं कि कई जीवन सतुष्टि के अभाव म ही नष्ट हो जाते हैं। बिना एक दूसरे को सभोग के लिए तयार किए सभोग मे प्रवृत्त होना, उसम एक की तृप्ति और अ य की अतृप्ति की स्थिति का होना हीन भावना प दा कर देता है और कई व्यक्तियो के मस्तिष्क म काम ग्रथिया उत्पन्न हो जाती हैं। इसी प्रकार एसी अनक समस्याए हैं जिन्हें सुव्यवस्थित वज्ञानिक दृष्टिकोण से दी जा सकने वाली काम शिक्षा के बिना हल नहीं किया जा सकता।

विवाह के बाद सतान पदा होती है। सतान के प्रति माता पिता और राज्य के क्या-क्या कत्तव्य हैं इस विषय पर नितात उपक्षा दिखाई जाती ह। इन सबको समझना आवश्यक होता है किन्तु तयारी और शिक्षा के अभाव मे सतति भार बन जाती है, निकम्मी रह जाती है और तब विवाह असह्य बोझ सा लगन लगता है।

विवाह को सब दृष्टिया स सोचकर व्यवस्थित किया जाय तो वह व्यक्ति क जीवन को सुविधाजनक बना सकता है, कि तु विवाह ही जीवन का सुख हो-एसा एकदम उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। विवाह एक बहुत बडा बधन भी है जो व्यक्तित्व के विकास म बाधक होता है और समाज को कई प्रतिभाओ की देन से वचित कर देता है। वह व्यक्ति को तग दायरे म सीमित करने का साधन भी है। उच्चतम प्रतिभाओ के लिए तो विवाह अभिशाप मात्र ही सिद्ध होते हैं।

कुछ प्यार और इश्क के चक्कर मे इस बुरी तरह फस जात हैं कि व विवाह को कोसत हैं।

प्यार अथवा इश्क !

जिसके पीछे कवि दीवाने हात हैं, कुछ लाग इस चक्कर मे फसकर अति भावुकता के शिकार हो जाते हैं-वास्तव मे इतनी बडी चीज नहीं जितनी बना दी गई है। इश्क का लक्ष्य सभोग प्राप्ति है। सौदय की अभिव्यक्ति उसकी भूमिका है। जितनी भी रागात्मक अभिव्यक्तिया है वे सभी सभोग की स्थिति को लाने का साधन मात्र हैं। अत बेकार की भावुकताओ स किशोर किशोरिया,

युवक-युवतियां का बचाना अत्यंत आवश्यक है। बहुत बडी आवश्यकता है ऐसी शिक्षा की जो भावुकताओं से होने वाली क्षतियों से समाज को बचा सके।

एक पत्नीव्रत और एक पतिव्रत भी घातक धारणाएं हैं। आवश्यकता पडने पर दूसरा विवाह करना पुरुष के लिए और न ही स्त्री के लिए कोई हेय कार्य है। इस रूढ़ता को हटाना ही बुद्धिमानी है।

युवकों युवतियों को बंधन तोडने होंगे। बंधन तोडने के लिए नीचे लिखे कदम उठाने होंगे—

1 अन्तर्जातीय विवाह किया जाय।

2 अन्तर्राष्ट्रीय विवाह को सभी सरकारी सुविधाएं प्रदान करें और युवक इस ओर बढने को प्राथमिकता दें।

3 स्वयं को काम विज्ञान से पूरी तरह शिक्षित करें।

4 परिवार कल्याण और परिवार नियोजन के विषय में अपने आप को पूर्णतया शिक्षित करें।

5 एक मात्र कोर्ट के माध्यम से ही शादी की जाय।

6 एक पति या पत्नि व्रत को जीवन का अंग न बनाया जाय।

7 लेन देन की प्रथा बिल्कुल समाप्त की जाय।

8 इश्क की भावुकता को तिलांजलि दी जाये।

9 स्त्री पुरुष प्यार की आडम्बर पूर्ण औपचारिक अथवा काव्यात्मक प्रेम भाषा को छोडकर सीधी बात करना सीखें।

10 अतृप्त संभोग और असफल प्यार से कभी निराश न हुआ जाय क्योंकि इससे हीन भावना पैदा होती है।

11 आत्मग्लानि और आत्म हत्या के रास्ते को कभी न अपनाया जाय क्योंकि इनसे बडी कायरता और मूर्खता दूसरी कोई नहीं।

विवाह और प्यार दोनों के प्रति व्यावहारिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का रखना नितान्त आवश्यक है।

तुम नवयुवक हो तुमसे आशा की जाती है की जा सकती है कि तुम रूढ़ियों को तोडकर अपने यौवन का परिचय दोगे, कि तुम अपना और अपनी आगामी पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करोगे, नए मार्ग का निर्माण कर गौरत हो अवश्य कराग।

यदि तुमने आशा के विपरीत काम किया, यदि तुम परिस्थितियों में हार मान गए, यदि तुमने सड़ी गली रस्मों के सामने घुटने टेक दिए, आत्म समर्पण कर दिया तो तुम निरे मूर्ख और कायर तो हो ही—साथ ही अपने आपको अपने समाज को जबरदस्त धोखा देने वाले धोखेबाज भी सिद्ध हो जाओगे। वह युवक अथवा युवती ही क्या यह इन्सान ही क्या जिसने रूढ़ियों पर प्रहार नहीं किया, जिसने उनके टुकड़े-टुकड़े करके उनको दूध की मक्खी की तरह निकालकर नहीं फेंक दिया।

जमाना उनकी जिन्दगी को रौंदेगा जो जमाने को आगे बढ़ाने में कुछ भी हाथ नहीं बढ़ाते। इतिहास उनको धिक्कारेगा जिन्होंने समाज को पीछे धकेलने की कोशिशें की हैं। जमाना उनको कभी माफ नहीं करेगा, कभी भी नहीं।

ऐसे भी लोग होते हैं और वे अपने आपको जवान भी कहते हैं और शरीर की उम्र से वे जवान होते भी हैं लेकिन मानसिक दृष्टि से वे या तो बच्चे होते हैं या बूढ़े। वे दकियानूसी बातों को इतनी हठपूर्वक पकड़े रहते हैं कि किसी भी प्रकार के विवेक की बात पर वे विचार करना चाहते ही नहीं। ऐसे लोग बड़े बेकार होते हैं। वे धरती का भार बढ़ाने वाले कहे जा सकते हैं। उनसे न उनकी संतति को कोई मार्गदर्शन मिल सकता है उल्टे वह तकलीफ का बोझ उठाने को मजबूर होती है और न ही समाज के ऋण को ही वे चुका सकते हैं। ऐसे लोगों को समझाने की सारी कोशिशें बेकार हो जाती हैं क्योंकि उनमें सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ सकने की क्षमता ही नहीं होती। वे अंधे होते हैं जिसके हाथ में जो पड़ गया उसे वह मजबूती से थामे रहता है।

क्या तुम ऐसे कच्चे मूर्खों में से हो, नहीं ऐसा नहीं है। तुम्हारे में सत्यासत्य का विवेक है। तुम्हारे में कमी है तो अपने साहस को पहचानने की। अतः अपने अन्तर्निहित साहस को पहचानो और निकम्मे रीति रिवाजों को ठुकरादो। तुम देखोगे कि जैसे ही तुमने बन्धन काटे—किसी में ऐसी हिम्मत नहीं कि कोई तुम्हारा मुकाबला कर सके।

एक सड़ी गली परम्पराओं के बन्धन में बंधे हुए परिवार में एक युवक ने इस बात से इनकार कर दिया कि वह घूंघट में लिपटी लड़की से शादी करे। लड़की पक्ष वाले अड़ गए—लेकिन लड़की वे स्वयं के बात जंच गई। उसका पिता रिश्ते से इनकार कर ही रहा था कि लड़की ने साफ तौर पर एलान कर दिया कि

कि वह उसी युवक के साथ शादी करेगी और अपने चेहरे पर घू घट नाम की कोई चीज नही रखेगी। आखिर जीत युवक युवती की रही और उस परिवार म पहली बार घू घट प्रथा पर तमाचा लगा। यदि युवक और युवती चाहत हुए भी इतना साहस नही दिखात तो यह मामूली सा परिवतन भी वे न कर पाते। इस दम्पति को अपनी जीत पर गौरव का अनुभव हुआ और वे आगे ऐसे बडे बडे परिवतन कर सके कि जिनका यदि वे न करते तो उसका उत्तरदायित्व उसकी सतति पर पडता।

स्पष्ट है कि कुरीतियो, रूढियो और अधविश्वासो को मिटाने के लिए तुम्हारे लिए थोडे से साहस का परिचय देना अनिवाय होगा और यदि तुमने दिया जिसका देना तुम्हारा कत्तव्य है और तुम्हार जीवन की जवानी की साथकता, तो समझलो कि तुम्ह बडे से बडा काम करने से कोई भी ताकत नही रोक सकती। ससार का कोई भी ऐसा उदाहरण नही कि हमने किसी को महान् व्यक्तित्व माना हो और उसने रूढियो की दीवार न तोडी हो।

इसलिए हिम्मत बाध कर आगे बढो—

जमाना तुम्हारे सामन सिर झुकाएगा।

स्थायी समाधान

पेट जल रहा है। पट की भट्टी जल रही है। किसको सुनाते हो ये धम और अध्यात्म, ईश्वर और आत्मा, सस्कृति और दशन, समाजनीति और सभ्यता की ऊची ऊची बातें य पेट की आग मे घी का काम करने वाली थोथी आदश की बाते। ब द करो, अभी ब द करो इनको ! ये भूखे इ सान को बहलान बहकाने की बातें हैं। इनमे कभी भूखे इ सान के पेट की भट्टी की ज्वाला शांत नही हो सकती।

फिर भी जो ऊचे आदर्शो की बातें करन से बाज नही आत और उस वातावरण म जहां भुखमरी जि दा है, एक हकीकत है, एव क्रूर वास्तविकता है समझो वे शोषण को कायम रखने के लिए विशेषतया दलाल नियुक्त किए गए हैं या उनका दष्टिकोण ही अमानवीय है।

जो पट की आग से झुलस चुका है वही उसकी आच को अनुभव कर सकता है। जिसन भुखमरी को अत्यत निकट से देखा है वही उसकी भीषणता अनुमान

लगा सकता है। जिसने ऐसा नहीं किया वह आदर्श की बहकाने वाली बातें करेगा। वह 'प्रजातन्त्र' 'व्यक्ति स्वातन्त्र्य' 'भारतीयता' जैसे शब्दों की उलझन भरी परिभाषाओं को इसलिए प्रस्तुत करेगा कि देश में भूख जिन्दा रहे भिखारियों का अस्तित्व रहे, बेकारी बरकरार रहे और ऐसे मध्यवित्त तथाकथित नेता धनिकों के टुकड़ों पर पलते रहें। उनसे पूछा कि तुमने कभी ऐसी स्वतन्त्रता प्रजातन्त्र और नागरिकता को सुरक्षित देखा है। जहां भूख जिन्दा हो, वह भूख जो इन्सान को खा जाती है जो किसी राष्ट्र को खा जाती है।

भूख के सामने धर्म, संस्कृति जाति, प्रजातन्त्र, व्यक्ति स्वतन्त्रता, दर्शन, अध्यात्म, ईश्वर, देवता आदि नहीं होते, होती है पेट की धधकती आग। इस आग को शांत करने के लिए जब समाज की व्यवस्था उसे काम नहीं दे सकती, जब वह उसे बेकार रहने को मजबूर कर देती है तो वह विवश होता है चोरी करने के लिए, डाका डालने के लिए और अन्य प्रकार की बेईमानी करने के लिए। यहां मर्यादा टूट जाती है, नैतिकता हवा हो जाती है–एक विडम्बना प्रतीत होने लगती है। रोटी पाना एकमात्र उद्देश्य होता है चाहे इस रोटी को पाने में पुरुष को अपना पौरुषीय सम्मान खोना, चाहे स्त्री को अपना शरीर नहीं शरीर की जवानी, अपनी इज्जत अपनी अस्मत बेचनी पड़े या अपने ही बच्चे को मार कर खाना पड़े।

भूख बेकारी से उत्पन्न होती है। तो क्या लोग जान बूझकर बेकार रहते हैं ? क्या लोग काम करना चाहते ही नहीं ? नहीं हकीकत यह है कि काम उन्हें मिलता ही नहीं लोग मेहनत करके पढ़ते हैं, जतन करके पढ़ते हैं और पढ़ लिख चुकने के बाद काम पाने के लिए, रोटी की तलाश में दिनरात मारे मारे भटकते फिरते हैं झिड़कियां सुनते हैं जलील होते हैं, व्यंग के पात्र बनते हैं और फिर भी काम नहीं मिलता। फिर भी बेकार रहते हैं।

बेकार व्यक्ति आत्मग्लानि में डूब जाता है। उसमें हीन भावना पैदा हो जाती है। उसको कुण्ठाएं खाने लगती हैं। वह निराश और पागल की स्थिति में दिन काटता है और जब और कोई उपाय काम नहीं करता तो रेल के नीचे कट कर अपने आप को काट डालता है जहर खा लेता है अपने परिवार के साथ आत्महत्या कर लेता है। आत्महत्या आसान काम नहीं होता जिसे वह करता है बल्कि वह उस समय यह काम करता है जब उसे पेट भरने का कोई और काम नहीं मिलता।

आत्म हत्या की स्थिति तक पहुंचने मे उसे बहुत बहुत सहना पडता है। घर उसे खाने को दौडता है। मा पराई और बाप पराया हो जाता है। वे उस आए दिन कोसते हैं। पत्नी उसे राक्षसी लगती और बच्चे उसकी जान के दुश्मन नजर आने लगते हैं और हरेक दरवाजा उसे बद मिलता है। हरेक राह उसे दीवार बनकर रोकती है। जीवन का जरा जर्रा उसे खाने को दौडता है। वह अपने बोझ को उठा नही सकता, सह नही सकता और जब सारे अरमान जल जाते है, सारी आशाए बुझ जाती हैं, तब वह इस जीवन से छुटकारा पाने की ओर आत्म हत्या के रास्त की ओर आख बद करके बढ जाता है, मौत के कुए मे कूद पडता है अपनी जवान बीवी और मासूम बच्चो को साथ लेकर।

पेट की भूख ने मानव को आत्महत्याए करन को मजबूर किया, पट की भूख ने नारियो को वैश्यालय खोलने को विवश किया पट की भूख ने प्रतिभाओ को पागल बना दिया, पेट की भूख ने माताओ को बच्चा का कातिल तक बनाया, पट की भूख ने एक भाई के द्वारा दूसरे भाई का खून तक करवाया और पट की भूख ने चरित्रवान व्यक्तियों तक को चार डाकू की श्रेणी मे पहुचा दिया। भूख सबसे बडी समस्या है उसके अस्तित्व न असख्य असख्या मानव प्राणियो को क्या होने को लाचार कर दिया। भूख व्यक्ति की सबसे बडी समस्या है और इसीलिए वह समाज की प्रमुखतम समस्या बनकर सामने आती है।

बेकारी और भूखमरी स प्रताडित व्यक्ति को चाह बोलन, लिखने और अ य विधियो से भाव प्रकाशन की स्वतत्रता दी जाय तब तक बेकार है जब तक उसकी रोजी की समस्या हल न करली जाये। उसे चाह जितने (अपनी 'अति बुद्धिवादिता के सहारे) सुनहरे उपदेश दो, सब बेकार हैं। अत सबमे प्रथम हल करने की समस्या यदि कोई है तो बेकारी की, भूखमरी की—बाकी सब दूसरे नम्बर की समस्याए हैं जिनको यदि कोई तथा कथित अवलम द प्राथमिकता देन का तक देता है तो समझनो कि वह तागे का घोडे स आग रखने का मूर्खतापूवक तक स सोचता है। समाज की सारी समस्याए, देश की सारी समस्याए घोडा है, दूसरे नम्बर की हैं जो भूख और बकारी मे पूव नही सुलझाई जा सकती।

बेकारी और भूखमरी वहां होती है जहा पूजी विशिष्ठ व्यक्तिया के पास इकट्ठी होती रहती है, मुनाफे के साधन चन्द लोगो के कब्जे म रहत हैं। यह एक तथ्य है, एक सत्य है। यह सभी देशो का सत्य है, जिनमें भारत भी एक है, यह सभी देशो की व्यवस्था का सत्य है—यह विश्वजनीन मानव सत्य है। सब इसम

तक और नतू न चकी कोई गुजायश ही नहीं। अब भी यदि इस सत्य को मानने से काई इनकार करता है तो उसे बुद्धू और मक्कार ही कहना होगा।

जब यह सवमान्य सत्य है कि बेकारी और भूखमरी का अस्तित्व पूजीवाद के अस्तित्व के आधार पर है तो उससे यह परिणाम निकालना भी इतना ही बडा सत्य है कि बेकारी और भूखमरी को मिटाने के लिए उसके आधार पूजीवाद को जड से समाप्त करना होगा। अत समाज और राष्ट्र का सबसे पहला कर्तव्य है शोषण की व्यवस्था को जड मे समाप्त करना, पूजीवाद का उन्मूलन करना।

शोषण का उन्मूलन करने का आशय है समाजवाद की स्थापना ससार के सभी देशो को यही अनुभव हो चुका है कि समाज ही बेकारी और भुखमरी को मिटाने का एकमात्र उपाय है।

अब प्रश्न उठता है कि पूजीवाद को समाप्त कैसे किया जाय। पूजीवाद पूजीपतियो की व्यवस्था की व्यवस्था है। पूजीपतियो के पास सब प्रकार के साधन हैं जिनसे वह अपनी व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए आकाश पाताल एक कर देते हैं। समाज की प्रथम श्रेणी प्रतिभाओ को वे खरीद कर रखते हैं। कानूनी पजो से बचाने वाले प्रथम श्रेणी के वकील उनके अधीन काम करते हैं। प्रथम श्रेणी के लेखको और कवियो म से लेखक और कवि खरीदकर वे समाजवाद के रास्ते से गुमराह करने वाले प्रचारक अपने पास रखते है। साम्प्रदायिकता और रग भेद को बढ़ावा देनेवाले नेता उनके पास होते हैं ताकि जगह जगह दगे हो और जनता उनमे उलझी हुई रहे। बढ़िया से बढ़िया दार्शनिक और धार्मिक लोगो को ये खरीद लेते हैं ताकि आम लोगो को आसानी से दूसरी तरफ मोड़ रक्खा जाय। बढ़िया से बढ़िया अध्यापक उनकी मान्यताओ की शिक्षा देने के लिए नियुक्त किए जाते हैं। इनके पास अव्वल दर्जे के गुडे और उनका गिरोह होता है जिसका वे इस्तेमाल करते हैं। इनके पास तस्कर राज होते हैं हिसाबदा होते हैं और कौनसा ऐसा हथियार है जो इनकी व्यवस्था को बनाए रखने के लिए जरूरी हो और जिसको उन्होंने न हथियाया हो। बढ़िया दलील देने वाले प्रभावशाली राजनीतिज्ञ होते हैं जो विधानसभाओ और ससदो मे उनके अनुकूल नियम बनाते रहते है और दूसरी ओर जनता को भुलावे म भटकते रहते रहने का निरतर प्रयास करते हैं। पुलिस भी इनका काम निकाल देती है, गुप्तचर भी इनकी मदद कर देते हैं, बड़े 2 विभागो के अधिकारी भी इनको सहायता देने को दौडते हैं और अतत सेना भी इनकी व्यवस्था के सरक्षण के लिए काम मे आ सकती है।

इतने साधन हैं इनके पास ! हिंसा ये करवाते हैं और अहिंसा इन्हें लाभ पहुचाती है। राजतन्त्र इनको लाभ पहुचाता है, प्रजातन्त्र इनको सरक्षण देता है। 'प्रजातात्रिक समाजवाद' के नाम पर भी ये ऐसी सस्थाओ का निर्माण करवा देते हैं। 'मार्क्सवाद' के नाम पर भी ये ऐसी सस्थाओ का निर्माण करवा देते है जो अन्तत उन्हीं का हितरक्षण करती है। यहा तक कि ईमानदार राजनतिक दलो मे भी ऐसे व्यक्ति घुसा देते हैं जो 'बडी धूतता' के साथ इनके पक्ष म दलीले देते हैं। यहा तक कि जनता का परमपिता और खुदा भी इन्हीं के पक्ष मे खरा उतरता है।

इतने बडे साधना के सरक्षण मे पूजीवादी व्यवस्था अपने को बचाए रखती है, अपने आपको छिपाए रखती है। इसके रहते हुए बेकारी और भूखमरी को मिटाना असम्भव है क्योकि इसका जीवन ही बेकारी और भूखमरी पर टिका हुआ है। इसलिए यह आवश्यक है कि समाजवादी विचारधारा का अधिनायकत्व हो जो इस पूजीवादी व्यवस्था को समाप्त कर सके। तुम्हे इसी समाजवादी अधिनायकत्व को लाने के लिए अपना जीवन लगाना होगा, तुम्हे पूजीवादी व्यवस्था को बेरहमी से मिटाने के लिए समाजवादी अधिनायकत्व की स्थापना करनी होगी। अन्यथा और कोई उपाय नही कि इन्सान के पेट की आग शात हो सके, उसकी बेकारी का नामोनिशान बाकी न बचे। अन्य कोई उपाय नही कि इस पूजीवादी शतानियत को हमेशा हमेशा के लिए शिकस्त दी जा सके।

पेट की भयकर ज्वाला को कभी मत भूलो बेकारी की विभीषिका का कभी आखो स ओझल मत होने दो। किसी की कोई ऐसी दलील मत सुनो जो पूजीवादी व्यवस्था का किसी भी तरीके से फायदा पहुचाती हो या तुम्हारा ध्यान दूसरी तरफ खीचती हो। तुम्हे समाजवाद को लाना है क्योकि यह तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य है और पहचानना है उन तत्वो को जो इसके रास्ते म बाधक हैं। देखो, कभी भी किसी भी तरीके से गुमराह न हो। कभी निराश न हो क्योकि अन्तिम जीत, समाजवाद का आगमन—सुनिश्चित है। जीवन के किसी भी मोड पर अपने लक्ष्य को मत भूलो।

समाजवाद का आना सुनिश्चित है और पेट की समस्या—बेकारी की समस्या का अन्त भी उतना ही सुनिश्चित, किन्तु इसके लिए यौवन को भरपूर जोश के साथ आगे बढना होगा।

▭

अनुशासन-भंग की सजा दो

क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिए समाज को क्रांतिकारी मूल्य देने होंगे। परिवर्तनकारियों को स्वयं आरोपित अनुशासन का पूरी तरह पालन करना होगा तभी वे समाज को अनुशासित कर सकेंगे। अनुशासन के बिना भी परिवर्तनकारी कार्य को सफल नहीं किया जा सकता।

अराजकतावादी तत्व अनुशासन तोड़ते हैं अथवा निहित स्वार्थ वाले वर्ग उन्हें ऐसा करने के लिए अपना हथियार बना लेते हैं। अनुशासनहीन वातावरण में संयम और सामाजिक न्याय की भावना उपहास मात्र रह जाती है। बुरी व्यवस्था में अशिक्षित की अपेक्षा शिक्षित अधिक अनुशासन भंग के अपराध करते पाए जाते हैं।

अनुशासन का पालन व्यक्ति और समाज के लिए आवश्यक होता है किन्तु अनुशासन का अर्थ अंधानुकरण नहीं होता। जहां अनुशासन अंधानुकरण बन जाता है वहां वह अनुशासन न रह कर अंध श्रद्धा का प्रतीक बन जाता है। स्वयं निर्धारित नियमों को जीवन में उतारने वाला व्यक्ति या दल ही परिवर्तनकारी शक्ति को उत्पन्न करने वाला हो सकता है। क्यू को तोड़ कर झपटने की मनोवृत्ति वाले कभी भी परिवर्तनकारी शक्ति के प्रेरक नहीं बन सकते।

अनुशासन तोड़ने वालों के साथ समझौता मत करो–उन्हें उनकी सजा दो।

▭

विरोध करो

विरोध करने में हिम्मत की जरूरत होती है, संघर्ष का दायित्व वहन करने की क्षमता की अपेक्षा होती है और साथ ही प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति की आवश्यकता होती है।

विरोध विकास के लिए आवश्यक वस्तु है। जड़ता कुंठा और अवरोध का कारण होती है। अतः प्रभावशाली विरोध करने की ओर बढ़ो। विरोध करो और वांछित परिवर्तन के आने तक विरोध करते ही जाओ।

जम कर विरोध करो, डट कर विरोध करो–किन्तु विकासमयता का दृष्टिकोण सामने रख कर। सारे समाज को अन्याय, अत्याचार और अंधता का

विरोधी बना डालो। ऐसा करने में कुर्बानियां भी देनी पड़े तो दो। ध्यान रखो उसका परिणाम अंततः अच्छा ही होगा।

यदि तुम गहराई में पैठकर विरोध नहीं कर सकते तो तुम अन्याय के सहयोगी हो। विरोध करने वालों को अन्यायकारी षडयंत्रों का पता लगाने के लिए स्वयं षडयंत्रकारी योजनाएं अपनानी पड़ती हैं—उन्हें अपनाओ और समुद्र तल की गहराई में पैठकर विरोध की सामग्री इकट्ठी करो।

ध्यान रखो विरोध में अद्भुत परिवर्तनकारी शक्ति है। अतः समाज को, समाज की बुरी व्यवस्था को बदलने के लिए, उसे उखाड़ फेंकने के लिए ताकि विकास को साकार रूप मिले विरोध का साधन अपनाओ।

चलो, विरोध करो, विरोध करो और अंत तक विरोध करते ही जाओ।

समझौता मत करो

दकियानूसी लोगों से कभी समझौता मत करो, क्योंकि उनकी मान्यताएं मरणशील होती हैं, समाज को पीछे धकेलने वाली होती हैं जबकि तुम आगे बढ़ते युवक हो, अग्रगामी नवयुवक हो।

पूंजीवादी मनोवृत्ति से कभी समझौता मत करो, क्योंकि वह भी मरणशील है और समाज के विकास का मूल अवरोध है।

अहंकार को संतुष्ट करने वाले लोगों से कभी समझौता मत करो—क्योंकि वे स्वकेन्द्रित होते हैं।

आदर्शवादी महान् कहे जाने वालों से कभी समझौता मत करो—क्योंकि वे दूसरों के विचारों का सम्मान करना नहीं जानते।

स्वार्थी लोगों से कभी समझौता मत करो।

सांप्रदायिक और अंधी राष्ट्रीयता के भक्त लोगों से कभी समझौता मत करो।

व्यक्तिवादी मान्यता से कभी समझौता मत करो। इसी तरह पलायनवादियों और पुनरावर्तनवादियों से भी कभी समझौता मत करो।

धर्मांध और आध्यात्मवाद से समझौता मत करो।

इन सब निषेधों के पीछे विधेयकता को सरलता से पहचाना जा सकता है।

अपने सपने सबके सपने

अपने सपने को सबका सपना बनाने लायक बना। अपनी इच्छा को सामाजिक इच्छा बना—तभी तेरी इच्छा की सार्थकता है।

सपने को साकार कर। मार्ग के अवरोधों को मिटाने के लिए कार्य कर। यदि अपने सपने और अपनी इच्छाओं का विस्तार समाजव्यापी कर सका तो वे सार्थक सिद्ध होंगी—उनका विरोध गलकर पिघल जायगा, अन्यथा वे अपूर्णता को प्राप्त करके घातक भी बन सकती हैं।

इच्छाओं को ऊंचा उठा और ऊंचा—इतना कि सारा वातावरण उन्हें अपना ले। अपने सपने सबके सपने बना—वे सुन्दर सपने।

सन् 1966 ई

चयन

एटम बम
विस्फोटक फ्लैश
हिरोशिमा का भस्म
मैं, तुम, वे
हमारा, तुम्हारा, सबका
धडकता इतिहास !
एटम बम
धमक पडा
भयकरतम चीख आखिरी
नागासाकी की
तीन चार पीढियो की
और
धू धू जलता रह गया
मात्र श्मशान
उस
हसती खेलती
उसकी अपनी दुनिया का।
विश्व
चकित, थकित, स्तभित, आतकित
पा गया परिचय
परमाणु युग का।
कौन है
जनघ्न वह
झपकते पलक, जिसने

कर दिया नस्तनाबूद
सुन्दर ऐतिहासिक
मानवीय सरचनाओ को
झटके मे एक ही
साथ जीवधारियो के सभी
नही
पर्याप्त नही
अर्थग्राह्य नही
शब्द कोई
भत्सना हेतु।
ओह,
बीसवी सदी के
अन्तिम छोर पर
आज
मानवता समग्र
खडी है
कगार पर
भडार के
नाभिकीय हथियार के,
क्षण भगुर
आ जाये जो
जानी अनजानी
विकृति
तो
कर गुजरे शैतान
युद्ध
तो
कहेगा कौन ?
सुनेगा कौन
जीवित होगा
मौन मौन मौन
जल उठेगी

चिता इन्सान की
वह फिर
ग्राएगा
क्या कभी ग्राएगा
लौटकर वापिस ?
यह सस्कृति
ससृति की,
यह साहित्य
सवेदनशील झकार
जुबा बेजुबानो की,
यह सगीत
तरग वेदनाग्रो, मधुरिमाग्रो की,
यह विज्ञान
ऊचाइया ग्रनुभवो की
ग्रौर
ये
नन्ही प्यारी सक्रिय ग्र गुलियो के
हाथ
यो
मिटा दिया जाय
एक साथ ?
झोक दिया जाय
सब कुछ
भट्टी मे
करले
सब ग्रात्मदाह
एक सब ?

इसी क्षण
कर चयन
यह या वह !

—•—

विकृतिकरण

पन्द्रहवी सदी के वेदात के ग्रादशवादी दार्शनिक माधवाचार्य ने ग्राठवी-छठी सदी ईसापूर्व म प्रतिपादित लोकायत दशन को उसके उदय के दो हजार साल बाद विकृत करके प्रस्तुत करने मे कोई कसर उठा नही रखी, बुद्ध की मृत्यु के बाद उनके ग्रनुयायियो ने उनके दशन की मनमानी व्याख्याए कर ग्रौर ग्रलग 2 कालो म ग्रौर ग्रलग ग्रलग देशा म उनकी शिक्षाग्रो की भिन्न भिन्न व्याख्याए कर ग्रौर उनको मतातरो म विभाजित कर ग्रपनिवचन का उदाहरण प्रस्तुत किया, बौद्ध दशन की तरह महावीर के जन दशन की भ्रात व्याख्याग्रो ने उस जन धम को विभिन्न सम्प्रदायो म बाट दिया जिसका उदय स्वय ब्राह्मणवाद ग्रौर वर्णाश्रम व्यवस्था के विरुद्ध सघष मे हुग्रा था, साख्य दशन के 'प्रकृति ग्रौर पुरुष' के सिद्धात को विकृत करके कुछ दशन के लेखको ने उसे 'द्वैतवाद' के खग मे धकेल दिया ग्रौर जगत की उत्पत्ति को प्रकृति ग्रौर पुरुष के समागम का परिणाम बता दिया जबकि कपिल का इस भ्रात व्याख्या से कोई सम्बन्ध नही था, साख्य की तरह कणाद् का वशेषिक दशन, जो एक तकसगत भौतिकवादी दशन था—ग्रान्शवादी भाष्यकारा के हाथ म पहुचकर विकृतियो ग्रौर ग्रपविकृतियो से युक्त हो गया ग्रौर याय दशन मे इगित गौतम के 'ग्रात्मा' शब्द को विकृत करके भाष्यकारो ने धीगामस्ती से उसमे ईश्वरवाद को घुमाने की व्यवस्था करदी। ग्राधुनिक युग म भी भारतीय दशन मे व्याप्त यथाथवाद ग्रौर ग्रादर्शवाद के बीच की द्वन्द्वात्मक तक पद्धति को ग्रपनी तोड मोड व्याख्या पद्धति मे ढालने वाली साजिशो की कमी नही।

भ्रांत व्याख्याग्रो ग्रथवा मनमाने ग्रथ फिट करने की जो विकृतियां भारतीय दर्शन म की जाती रही हैं वैसी ही दुनिया भर के ग्रय दशनो म भी भरपूर मात्रा म पायी जाती है। माक्सवादी दशन के साथ भी ग्रनेक प्रकार की मनमानी की गयी है, लेकिन उसके साथ की जाने वाली विकृतियो के खिलाफ सघष करने वाला की भी कमी नही है।

पराडी की तरह जोडने-घटाने, गलत और भ्रांत व्याख्या करने जबरदस्ती तक संगति बिठाने या बौद्धिकीकरण के द्वारा गलत को सही, सही को गलत ठहराने, अपने विचारों के अनुकूल अर्थांतरण करने, संदर्भ और प्रसंग से हटाकर किसी अंश को उद्धृत करने और उससे मनमाने नतीजे निकालने, अपरिपक्व शिष्यों अथवा लोगों को अपने मन के माफिक तरीके से समझाने और उनमें संस्कार पैदा करने की चेष्टा करने और किसी की मूल अथवा मौलिक प्रस्थापना की उपेक्षा करके उसके गौण केन्द्र बिन्दु बना प्रस्तुत करने आदि के द्वारा किया जाता है। इससे भ्रांतियों की उत्पत्ति होती है, अनर्थकारी घटनाएं घटित हो सकती हैं और कुसंस्कारों बीज के बोए जा सकते हैं।

विकृतिकरण का चरण विकासोन्मुख कभी नहीं होता बल्कि वह ह्रासो-न्मुख ही होता है। विकृतिकरण का इतिहास इसका साक्षी है। विकृतिकरण वैज्ञानिकता का शत्रु होता है क्योंकि वह यथार्थ को विकृत करने के बिन्दु से ही प्रस्थान करता है विकृतिकरण विकृतिकर्त्ता के मनोविकार का परिचय देता है उसकी भ्रष्टता का स्मरण करता है अतः उसको पतन की ओर धकेलता है तथा दूसरी ओर जिस व्यक्ति अथवा वस्तुविशेष का विकृतिकरण किया जाता है उसका वास्तविक स्वरूप भी वह बिगाड कर सामने रखता है। इस तरह वह दोनों के लिए हानिकर सिद्ध होता है, यही तक नही बल्कि जो भी उसके सम्पर्क में आता है उसे भी वह मार्गांतरित कर देता है अतः वह इस तृतीय के लिए भी अभिशाप सिद्ध होता है।

प्रत्येक लेखक चाहेगा कि वह मरने के बाद अपने अथवा पराए लोगों के द्वारा विकृतिकरण का शिकार न बनाया जाय।

विकृतिकरण हजारों सालों से शिक्षा के एक दुश्मन के रूप में शिक्षा के साथ विविध रूपों में जुडा हुआ है। दर्शन, साहित्य, इतिहास, समाज शास्त्र, मनोविज्ञान, ललित कलाएं, शिक्षा शास्त्र, राजनीति, नीतिशास्त्र, धर्म तथा विधि आदि अनेक विषयों की विभिन्न शाखा उनके सिद्धांतों और उनकी अगणित रचनाओं की विकृत व्याख्याओं को पढ़ने वाली पीढ़ियां सदियों तक गलत धारणाओं से ग्रस्त रहने को विवश होती रही हैं, अनेक विरोधाभासों के जंजाल में उलझती रही हैं अनेक मनोवेगों के भंवर में चक्कर काटती रही है और अनेक कुमार्गों की ओर प्रवृत्त होती रही हैं।

यदि शोधकर्त्ता समालोचक विकृतिकरण के जाल न काटते तो अनेकों सच्चाइयां और अच्छाइयां अंधेरे के गर्त में ही दबी रह जाती। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के

विकास ने यदि विकृतिजन्य अंधकार के पर्दे को न फाड दिया होता तो अब तक 'माया महाठगिनी' के जादू से हम मुक्त हो ही नही पाते।

आज भी शिक्षा मे विकृतिकरण का विष विद्यमान है। आज भी शिक्षकों म अनेक विकृतिकरण के पोषक हैं विकृतिकरण के स्वय कर्त्ता हैं, आज भी उप देशक नेता, धर्मगुरु राजनेता और विधिवेत्ता आदि विकृतिकरणके रोग से स्वय रोगग्रस्त हैं, आज भी अविकसित और निरक्षर समाज विकृतिकरण के कारावास म कद हैं, आज भी व्यक्ति वज्ञानिक सूझ की परिधि से जानबूझकर बाहर रखा जा रहा है, आज भी ढेरो साहित्य विकृतियां पदा करने के लिए लिखा जा रहा है, आज भी सेठो के अखबार, साम्राज्यवादी देशो के अखबार सच्चाइयो को प्रतिक्षण विकृत करने म प्रतिबद्ध है, आज भी भाड़ रचनाकार विकतियाँ-दर-विकत्तियाँ पदा करते चले जा रहे है और आज भी चिंतन के आवरण म चेतना को कुण्ठित और नपुसक बनाने की कुचेष्टाए जारी हैं।

व्यक्ति समाज और शिक्षा की स्वस्थता के लिए उनको अपने शत्रु विकति करण के विरुद्ध अनवरत लगन, सुदृढ सकल्प, वज्ञानिक चिंतन, गहन शोध और प्रभावकारी अभिव्यक्ति के साथ नव चेतना को सक्रिय करते हुए-हर स्तर पर सघष करना होगा।

सन् 1985 ई

डायरी का नोट

मैंने कभी नियमित रूप से डायरी नही लिखी, क्योंकि जिन्दगी मे व्यवस्थित रहने का अवसर ही नही मिला। वैसे कई दोस्तो ने खाली डायरियाँ कम्पनी प्रचारार्थ अवश्य भेंट की। उनमे कभी 3 जनवरी के पेज को 5 मई का हिसाब भरा तो कभी गद्यात्मक कविता 4 फरवरी के पेज पर 18 सितम्बर को लिखी। इसी प्रकार बेहरतीब पन्ने रग दिए। इन पन्नो के कुछ स्वीकृतियो के टुकडे यहा मिला दिए गए हैं।

मैंने देखा कि मुझे अनेक बार गलत समझा गया, गलत रूप मे पेश किया गया, गलत बातें प्रचारित की गई मेरे द्वारा कही गई बातो को गलत रूप से उद्धृत किया गया, सन्दर्भ से काटकर मनमर्जी से मेरे वाक्यो का उपयोग किया गया, मेरे साथ दूसरे सम्बन्धो को गलत रूप मे दर्शाया गया तथा मेरा और मेरे नाम का उपयोग अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए किया गया। जब मेरे जीते जी यह सब कुछ हुआ और मैंने इसे देखा, पढा, सुना महसूस किया, भोगा और जिया तो मेरे लिए यह सोच सकना स्वभाविक ही था कि मेरे मरने के बाद पता नही कहा–कहा किस–किस रूप मे मेरी दुर्गति की जायगी और क्योंकि मुझे कहने का अवसर दिए बिना मुझे विज्ञपित किया जायगा।

पिछले 45 साल से मैं नास्तिक हू। ससार के निर्माता के रूप मे 'ईश्वर' जैसी किसी वस्तु का या तत्व का कोई अस्तित्व नही है। इसके बावजूद कोई किसी सदम से हटकर जाने या अनजाने मुझे आस्तिक अथवा ईश्वरवादी कहने की हिमाकत करता है तो वह भावुक है, मूर्ख है अथवा किसी स्वार्थवश ऐसा करता है। मैं भाववादी या आदर्शवादी दर्शन का घोर शत्रु हू। मैं कम्युनिस्ट हू।

मैंने वैचारिक और व्यावहारिक दोनो प्रकार के सघर्षों मे कम्युनिस्ट के रूप मे ही भाग लिया है।

मन हर सामाजिक रूढी को ताडन की चेष्टा की है। अत मेर मरन प
जो कुछ भी सस्कार किया जायगा, अथवा धार्मिक या पारिवारिक रीति रिवा
का निर्वाह किया जायगा, वह मेरे जीवन मूल्यो के विपरीत होगा। अनिवाय
कवल शरीर को जलाने की है-प्रथमत विद्युत मशीन से अयथा लकडियो से
न पिंड, न गगा या सरोवर स्नान और न ही मत्र-तत्र या अन्य क्रिया कम
शरीर भस्म और बस।

मैंने मन्दिर के पिछवाडे में द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद पढाय
है और उस कमरे का उपयोग आन्दोलना की मीटिंगे करने मे किया है। इस
पुस्तकालय-वाचनालय म म लिखता पढता रहा हू, और इसी के एक कमरे
मुझे सघष के दौर म गिरफ्तार करके ले जाया गया है। इसी मन्दिर के ग
या गलरी म मने वचारिक और दार्शनिक सघष छेडे हैं। मैं हर गाष्ठी का ए
विवादास्पन्न व्यक्ति रहा हू।

वचारिक और व्यावहारिक सघष म हिस्सा लेना ही मेरी एक मात्र वसी
यत है। यही एक मात्र विरासत है।

मैं सम्पति रहित, भारी भरकम व्यक्तित्व से रहित, अप्रसिद्ध साधारण
इसान हू-किन्तु सवेदनशील मितभाषी, सघषशील और अन्तमुखी हू। निश्चय
ही याद करने योग्य नहीं। सफलताओ और असफलताओ का सतुलन तो रह
है इस जीवन म-लेकिन मुझ जसे साधारण व्यक्ति की सफलताए और असफल-
ताए दोनो साधारण ही रही हैं।

इस खूबसूरत प्रकृति और आज तक की इस खूबसूरत प्रगति स परिपूर्ण
इस दुनिया को छोडकर कल अपनी भूमिका समाप्त कर दूगा। मेरे द्वारा जिया
गया और किया गया समूचे मानव इतिहास का अणुमात्र बन जायगा।

प्रसन्नता है तो यह कि आने वाली हर पीढी सघष करती हुई अधिक
और अधिक और और अधिक खूबसूरत काम करगी और
जीवन जिएगी।

जिस्म पर जख्म, दिल में दर्द आंच आंखों में
बिना लिए तो कोई आदमी नहीं होता।

□□